महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा का मुख पत्र

वर्ष : ६० **अंक** : २२
दयानन्दाब्द: १९४
विक्रम संवत्: कार्तिक शुक्ल २०७५
कलि संवत्: ५११९
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,११९

सम्पादक
डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

प्रकाशक-परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाष: ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-श्री मोहनलाल तँवर
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क

भारत में

वार्षिक-२०० रु., **द्विवार्षिक**-३९० रु.
त्रिवार्षिक-५८० रु.
आजीवन (१५ वर्ष)-२००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.

विदेश में

वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षा:,
सत्यव्रता रहितमानमलापहारा:।
संसारदु:खदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकारा:।।

RNI. No. ३९५९/५९

परोपकारी

नवम्बर द्वितीय २०१८

अनुक्रम

०१. महर्षि दयानन्द का सम्पूर्ण दर्शन	सम्पादकीय	०४
०२. मृत्यु सूक्त-१८	डॉ. धर्मवीर	०६
०३. १३५ वाँ ऋषि बलिदान समारोह		०९
०४. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०५. वेदगोष्ठी-२०१८		१४
०६. सम्मिलित परिवार, तब और अब	आ. उदयवीर शास्त्री	१६
०७. विज्ञान की ईश्वर सम्बन्धी...	रामनिवास गुणग्राहक	२०
०८. वैदिक पुस्तकालय के नये संस्करण		२६
०९. यज्ञीय जीवन की आवश्यकता	प्रो. धर्मवीर	२७
१०. स्वर्ग में महासभा	पं. रुद्रदत्त शर्मा	३१
११. शङ्का समाधान- ३७	डॉ. वेदपाल	३७
१२. संस्था समाचार		३९
१३. आर्यजगत् के समाचार		४१
१४. ऋषि मेला - २०१८ कार्यक्रम		४२

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com → Daily Pravachan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

महर्षि दयानन्द का सम्पूर्ण दर्शन

१९वीं शताब्दी के समाज सुधारकों, चिन्तकों, राजनीतिज्ञों इत्यादि की दृष्टि से देखा जाए तो महर्षि दयानन्द का व्यक्तित्व इन सबसे विलग है। अद्वितीय मेधा के धनी, परराष्ट्र से स्वतन्त्रता के प्रति अत्यन्त जागरूक, समाज निर्माण के श्रेष्ठ योद्धा, वेदों के प्रकाण्ड भाष्यकार तथा जन-जन के प्रिय महर्षि दयानन्द थे। महर्षि दयानन्द के समक्ष केवल एक चुनौती नहीं थी, अपितु अनेक चुनौतियाँ थीं और प्रारम्भ में कोई उनका सहायक नहीं था। परन्तु उन्हें मानव का निर्माण करना था और ऐसा मानव जो सात्त्विक विचारों के साथ विश्वबंधुत्व का संवाहक हो। इसीलिए उन्होंने **आर्य** और **आर्यसमाज** नाम पुनः प्रचलित किए। वे वेदमार्गानुगामियों के एक श्रेष्ठ समाज का सपना देखते थे, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति धर्म (कर्त्तव्य) से बंधा हो और उन कर्त्तव्यों को करते हुए वह स्वयं के भी कल्याण के मार्ग का पथिक हो। लेकिन तत्कालीन स्थिति में भारत परतन्त्र था और इस वेदना से वे अन्दर तक आहत थे। इसीलिए तो उन्होंने कहा था, कि विदेशी शासन माता-पिता की तरह सुखकारक भी क्यों न हो, वह स्वराज्य के समतुल्य नहीं होता। उन्होंने यह उस स्थिति में कहा जब अंग्रेजी राज उन पर कुदृष्टि डाले हुए था। भारतीय पौराणिक समाज अंधविश्वास और रूढ़ियों से आक्रांत था। भारत में इस्लाम और ईसाई मत भारतीय समाज को धर्मान्तरण से निगल रहा था। ऐसी स्थिति में जिस ऊहा और दिव्यदृष्टि का उन्होंने प्रयोग किया वह अद्वितीय था। इसीलिए पुनर्जागरण आन्दोलन में महर्षि दयानन्द का अवदान अतुलनीय कहा जाता है। तत्कालीन तथाकथित योगियों और आध्यात्मिक महापुरुषों में स्वराज्य के प्रति जागरूकता का अभाव दृष्टिगोचर होता है।

महर्षि दयानन्द का दर्शन सामान्य भाषा में **त्रैतवाद** से अभिहित किया जाता है अर्थात् ब्रह्म, जीव, एवं जगत् ये तीनों सत्तायें शाश्वत हैं। लेकिन महर्षि दयानन्द अन्य दार्शनिकों की भाँति मात्र कोरे दार्शनिक नहीं थे, वे समाज और राष्ट्र के पुरुषार्थी निर्माता थे, उनका दर्शन जीवन के व्यावहारिक धरातल पर अनुकरणीय था। इसीलिए उसमें सृजनशीलता है। केवल ब्रह्म में रमे रहने का प्रदर्शन जीवन का लक्ष्य नहीं है, अपितु जीवन के दायित्वों का निर्वाह करते हुए मोक्ष को प्राप्त करने की अभीप्सा ही महर्षि दयानन्द को स्वीकार थी। मोक्ष प्राप्ति का सर्वांगपूर्ण सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दर्शन ही वैदिक दर्शन है, जो दयानन्द को स्वीकार्य था।

महर्षि का ब्रह्म अन्य दार्शनिकों की भाँति, चाहे वे विशिष्टाद्वैत के हों या अन्य अद्वैतवाद इत्यादि के या पाश्चात्य जगत् के जॉन ब्रेडले, इमेनुएल कांट या रसल के, उनका ब्रह्म मनुष्य का पिता है, भाई है, माता है, वह जगत् का निर्माता है, वह मित्र भी है, वह गुरु भी है, वह पुरोहित भी है। ये सभी जीवात्मा को परम तत्त्व से जोड़ने वाले सेतु हैं। महर्षि दयानन्द इसीलिए अवतारवाद को नहीं मानते। उनके अनुसार संपूर्ण ब्रह्माण्ड की ज्ञानपूर्वक की गई रचना को देखकर ही ब्रह्म की अनुभूति होती है। ब्रह्म का साक्षात्कार उसकी अद्वितीय और अनुपम रचना से हो सकता है। मानव, पशु, पक्षी, कीट, पतंगे, वनस्पतियाँ इत्यादि ये सभी ब्रह्म की विराटता, उसके भूमा, उसके सत्-चित् आनन्द, उसके सर्वज्ञ, उसके अनन्त भाव को स्पष्ट करती हैं। जब हम प्रभु का सम्यक् चिंतन करते हैं तभी उसकी निकटता का भाव स्तुति, उपासना और प्रार्थना से सिद्ध होता है।

महर्षि दयानन्द के दर्शन का उद्‌भव वेद से है। उन्होंने वेद को आधार बनाकर ही संपूर्ण चिंतन को एक नई दिशा दी। तत्कालीन समय में फैले हुए विभिन्न मत-मतान्तरों का खण्डन महर्षि दयानन्द जैसा उद्‌बुद्ध विद्वान और निर्भीक योगी ही कर सकता था। उन्होंने जहाँ अवैदिक मतों का खण्डन किया, वहीं अपने विचार मण्डन के रूप में भी प्रस्तुत किए। इसलिए महर्षि दयानन्द के दर्शन में परम-तत्त्व के साथ समाज सुधार के विभिन्न प्रकल्पों में परमपिता परमेश्वर के प्रति अगाध श्रद्धा और उनके प्रति उच्च भावना दृष्टिगोचर हुई है। उनका यह कथन **''हे मेरे प्रभु! आपके अनुग्रह से हम सब लोग परस्पर प्रीतिमान्, रक्षक, सहायक, परम पुरुषार्थी हों। एक- दूसरे का दुःख न देख सकें। स्वदेशस्थादि मनुष्यों को परस्पर निर्वैर और ....पाखण्ड रहित करें।''**

ऋषि का यह कथन उनके दर्शन का निचोड़ है। उन्होंने **आर्याभिविनय** में परम सत्ता के विषय में जो विचार दिए हैं वे संसार को मिथ्या मानकर नहीं किए। उन्होंने इसी में लिखा है- **''हे महाराजाधिराज परब्रह्मन्! 'क्षत्राय' अखण्ड चक्रवर्त्ती राज्य के लिए शौर्य, धैर्य, नीति, विनय, पराक्रम और बलादि उत्तम गुणयुक्त कृपा से हम लोगों को यथावत् पुष्ट करें। अन्य देशवासी राजा हमारे देश में कभी न हो और हम लोग पराधीन कभी न हों। हे प्रभो! 'द्यावापृथिवीभ्याम्' = स्वर्ग अर्थात् परमोत्कृष्ट मोक्षसुख पृथिवी अर्थात् संसार-सुख (अभ्युदय) इन दोनों के लिए हमको समर्थ कर।... अपनी कृपादृष्टि से हमारे लिए विद्या, पुरुषार्थ, हाथी, घोड़े, सुवर्ण, हीरादि रत्न, उत्कृष्ट शासन, उत्तम पुरुष और प्रीत्यादि पदार्थों को धारण कर, जिससे हम लोग किसी पदार्थ के बिना दु:खी न हों। हे सर्वाधिपते! ब्राह्मण (पूर्णविद्यादिसद्गुणयुक्त) क्षत्र (क्षत्रबुद्धि, विद्या तथा शौर्यादि गुणयुक्त, विश) वैश्य (अनेक विद्योद्यम) बुद्धि, विद्या, धन और धान्यादि वस्तु युक्त तथा शूद्रादि भी सेवादि गुणयुक्त-ये सब स्वदेशभक्त उत्तम हमारे राज्य में हों, अर्थात् किसी भी बात के लिए हम विदेशों पर निर्भर न हों।''**

महर्षि दयानन्द युगप्रवर्तक तत्त्ववेत्ता थे, जिन्होंने भारतीय चिन्तन में आध्यात्मिक मूल्यों की सर्वोपरिता को स्वीकार किया और इस प्रकार वे इहलौकिक और पारलौकिक दोनों के समन्वय की नवजागृति के पुरोधा थे। उनका सर्वांग दर्शन नैतिकता की भित्ति और प्राचीन सामाजिक व्यवस्था पर आधारित था जो वेदानुकूल थी। इसके लिए उन्होंने प्रचलित वेदान्त के विभिन्न सम्प्रदायों जैन, बौद्ध, कबीरपंथी, चार्वाक के अनुयायियों इत्यादि का कठोरता के साथ खण्डन करते हुए मानव निर्माण की जिस समसामयिक आवश्यकता को प्रकट किया, वह उनकी बहुमुखी प्रतिभा को द्योतित करती है। परवर्ती काल में सामाजिक, धार्मिक, दार्शनिक और राजनीतिक सभी व्यवस्थाओं में हमें महर्षि का चिन्तन परिलक्षित होता हुआ प्रतीत होता है। उदारवादी या कठोरतावादी, वस्तुवादी या ज्ञानसापेक्षवादी या अनुभववादी ऐसी किसी भी विचारधारा से न जुड़कर उन्होंने भारतीय संस्कृति की अविच्छिन्न धारा को पुन: प्रवाहित किया और अविद्या तथा निहित स्वार्थों के वशीभूत वेदविरुद्ध विभिन्न दार्शनिक पद्धतियों का खण्डन युगबोध के आधार पर किया।

महर्षि दयानन्द ऐसे मनस्वी थे जिन्होंने वेद के ऐकेश्वरवाद को सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों ही पक्षों में सिद्ध किया और वेदों के सत्यार्थ को स्पष्ट करते हुए उन्होंने ब्रह्म के सत्यस्वरूप को, जिस पर मतवाद की मिट्टी जम गई थी, उसे हटाकर मानवमात्र का अति उपकार किया है। सत्यासत्य के निर्णय की विवेचक बुद्धि का आधार उनका वेद-ज्ञान ही था, जो उन्हें तपस्या और योगाभ्यास से प्राप्त हुआ था। यही उनका वैज्ञानिक तत्त्ववाद और ऋषित्व है। वे पश्चिमी चिन्तक बर्ट्रैंड रसेल, विट्गेंस्टाइन, अय्यर या मूर के एकांगी पक्ष को स्वीकार नहीं करते, अपितु उनके सर्वांग दर्शन की धुरी ब्रह्म है, जिसमें जीव और प्रकृति गतिमान रहते हैं। उन्होंने दर्शन को बहुत सीधी और सरल भाषा में ऋषियों की परम्परा से योगसिद्धता के साथ वेदार्थ का शाश्वत स्वरूप प्रकट किया। इसलिए यह कहना सर्वाधिक उपयुक्त होगा कि आज महर्षि के सर्वांग दर्शन (त्रैतवाद) की महती आवश्यकता है जिससे राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सभी समस्याओं का समाधान निकल सकता है, बिना किसी अंधविश्वास और पाखण्ड के। महर्षि का दर्शन उन अध्येताओं के लिए विशेष रूप से मूल्यवान है जो जीवन के व्यावहारिक और आध्यात्मिक पक्ष के अनुयायी हैं। दर्शन में निष्णात चिंतकों के लिए यह दर्शन किसी पूर्वाग्रह से निर्मित सीमाओं में आबद्ध नहीं है, अपितु वेद-प्रतिपादित मान्यताओं पर आधारित है।

महर्षि का बलिदान दिवस समीप है। वैदिक सम्पत्ति और मानवता के सजग प्रहरी उन महर्षि के स्मरण का सर्वोत्तम उपाय वेद-शास्त्र का अनुशीलन और तपश्चर्यापूर्वक उनके तत्त्वार्थ को हृदयंगम करते हुए लोकोपकार के लिए पुरुषार्थ करना ही है। निष्क्रिय रहने से लोक-परलोक दोनों का क्षय होता है, अत: वेदों के तत्त्व को जानते-मानते हुए ऋषि के मिशन को सार्थक करने में ही कल्याण है-

यो हि वेदे च शास्त्रे च ग्रन्थधारणतत्परः।
न च ग्रन्थार्थतत्त्वज्ञः तस्य तद्धारणं वृथा।।

(महाभारत)

- **दिनेश**

मृत्यु सूक्त-१८

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्या

परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां, यस्ते स्व इतरो देवयानात्।
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि, मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान्।।

इस वेद-ज्ञान की चर्चा में हम ऋग्वेद के दशम मंडल के १८ वें सूक्त पर विचार कर रहे हैं। इस सूक्त को मृत्यु-सूक्त कहा है, क्योंकि इसका देवता मृत्यु है, इसका ऋषि यामायनः और इसका छन्द त्रिष्टुप है। विस्तार से विचार करते हुए जो चीज़ हमारे सामने दिखाई देती है वह है- जीवन का बनना और जीवन का समाप्त हो जाना। जीवन के बनने को, प्रारम्भ को हमने जन्म कहा था और जीवन की समाप्ति को हमने मृत्यु कहा। इस मृत्यु शब्द के सुनने मात्र से आदमी भयभीत है। इसको वह नहीं चाहता, इससे वह दूर रहना चाहता है, इससे वह बचना चाहता है तो उसे क्या करना होगा? हमारे पास विकल्प है- हम इसको चाह भी सकते हैं, इसको नहीं भी चाह सकते। ऐसी स्थिति में हमें कारणों का पता होना चाहिए कि कौन-सी परिस्थिति है जिससे हम अनुकूलता को प्राप्त कर सकते हैं और कौन-सी परिस्थिति है जब हम प्रतिकूलता को प्राप्त कर सकते हैं।

हमारे इस देखने में दो बातें दिखाई देती हैं-ये जो संसार में प्राणी हैं, मुख्य रूप से दो भागों में बाँटे जा सकते हैं-एक तो मनुष्य हैं और बाकि पशु-पक्षी, कीट-पतंग हैं, वे सब एक श्रेणी में हैं। उनमें सबसे बड़ा अन्तर है, शरीर की दृष्टि से मनुष्य एक विकसित शरीर वाला प्राणी है। शरीर को चलाने के जितने साधन मनुष्य के पास हैं इतने साधन, इतनी इन्द्रियाँ और किसी पशु, पक्षी, कीट, पतंग के पास नहीं हैं। मनुष्य के पास पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ और विकसित मन, बुद्धि हैं और जितने दूसरे प्राणी हैं, उनके पास इनका बहुत ही छोटा अंश है। वो शरीर की दृष्टि से भी कम विकसित हैं, इन्द्रियों की क्षमता से देखा जाए तो भी कम हैं और मन बुद्धि के विकसित रूप देखें तो वहाँ भी बहुत कमी है। तो ऐसा क्यों? इसका कोई कारण होना चाहिए।

कारण हमारी समझ में आता है कि मनुष्य कहीं-कहीं स्वतन्त्र है और कहीं-कहीं परतन्त्र है या विवश है। सम्पूर्ण रूप से परतन्त्र भी नहीं है और वह सम्पूर्ण रूप से स्वाधीन भी नहीं है। उसको शरीर मिला, इस शरीर का वह बहुत अंशों में अपनी इच्छानुसार उपयोग कर सकता है। लेकिन इसका जन्म है, मृत्यु है, सुख है, दुःख है, वह इसकी इच्छानुसार नहीं चल सकता। इस इच्छानुसार चलने को और इच्छानुसार न चलने को हम दो शब्दों से समझते हैं, दो भागों में बाँटते हैं। पहली चीज़ है कि हम शरीर को धारण करते हैं, तो शरीर के साथ हमारी जो आवश्यकतायें हैं हम उनको पूरा करने के लिए बाध्य हैं, उन आवश्यकताओं को हम **भोग** कहते हैं, ये भोग हमें अनिवार्य रूप से मिलते हैं और दूसरा हम अपनी इच्छा से प्राप्त कर सकते हैं। जहाँ इच्छा से प्राप्त कर सकते हैं वह हमारी स्वतन्त्रता का क्षेत्र, **कर्म** का क्षेत्र है और जहाँ हम उनको पाने के लिए विवश हैं, पराधीन हैं, इसको हम भोग के रूप में समझते हैं। इस प्रकार हमारे कार्य के दो तरह के परिणाम या परिस्थितियाँ हैं- भोग और स्वतन्त्रतापूर्वक कर्म, **कर्म-योनि और भोग-योनि।** मनुष्य का जो जीवन है या जन्म है या शरीर है वह कर्म-योनि और भोग-योनि दोनों है। अर्थात् इसमें स्वतन्त्रता से वह कुछ कर भी सकता है और कुछ को वो भोगने के लिए, अनुभव करने के लिए विवश भी है। जो विवशता का भाग है वो भोग कहलाएगा और जो स्वतन्त्रता का भाग है वो कर्म कहलाएगा।

संसार में मनुष्य के अतिरिक्त बाकि जितने पशु-पक्षी प्राणी हैं उनमें ये दो चीजें नहीं हैं। उनके पास स्वतन्त्रता नहीं है, कर्म करने का अधिकार नहीं है। वो पैदा हुए हैं तो शरीर के लिए जो-जो आवश्यक है, भगवान् ने उनको वैसे-वैसे साधन और वैसी-वैसी इन्द्रियाँ दी हैं और वो

उनका उपयोग करते हैं और इस शरीर को जीवित रखते हैं। इस जीवित शरीर में उनको जो-जो सुख-दुःख, हानि-लाभ, प्रसन्नता-अप्रसन्नता है उतने का अनुभव वो कर सकते हैं, उससे अधिक का वो नहीं कर सकते लेकिन मनुष्य कर सकता है, अधिक का मतलब कुछ ऐसा भी कर सकता है जिसका फल उसे अभी मिला नहीं है। अच्छे फल के लिए, सुख के लिए कुछ अच्छा भी कर सकता है और यदि वो विवशता से अज्ञानता से, प्रमाद से, आलस्य से कुछ अन्यथा करता है तो उसका भी फल उसको भोगना ही पड़ता है, क्योंकि नियम यह है कि कुछ किया है तो कुछ फल भी होगा।

कर्म किया है तो कर्म का परिणाम होगा, कर्म का फल होगा, क्योंकि जब हम 'कर्म' शब्द का प्रयोग करते हैं तो उसमें 'कर्मफल' शब्द प्रयोग करते हैं। इसमें दोनों चीजें साथ-साथ समझ में आ रही हैं-कर्मफल, फल तो है किन्तु कर्म का फल है, केवल फल नहीं है। परिणाम फल है और वो परिणाम तब हो सकता है जब पहले कोई कर्म किया गया हो।

हमारा शरीर भी कर्म है या कर्म-फल है? तो इस पर विचार करते हैं कि जो चीज हमें मिली है वो फल है और यदि वह मिली हुई चीज फल है तो उसका निश्चित कोई कर्म पहले रहा है क्योंकि बिना कारण के कोई कार्य कभी होता नहीं है। मनुष्य का शरीर मिला है तो सबको तो नहीं मिला, पशु-पक्षियों को नहीं मिला, कीट-पतंग को नहीं मिला तो क्यों नहीं मिला? इसका कोई कारण रहा होगा। इस पर विचार करने पर सामान्य सिद्धान्त यह मिलता है कि जब किसी जीवात्मा के अच्छे और बुरे कर्म समान होते हैं, यदि उसके कर्म की जो तुला है वह सम है तब वह मनुष्य के जन्म को प्राप्त करता है। मनुष्य जन्म को प्राप्त करने पर यदि वो अच्छे कामों को अधिक करता है तो अपनी मनुष्य की प्रवृत्ति को आगे बढ़ा सकता है और यदि उसने अनुचित कार्यों को अधिक किया, पाप के कार्यों को अधिक किया तो भविष्य में वह किसी दूसरी योनि में जा सकता है। यह जो सिद्धान्त है, यह आत्मा के पुनर्जन्म का है और यह पुनर्जन्म का सिद्धान्त वैदिक सिद्धान्त है।

अन्य सब मत-मतान्तरों में या तो मरने के बाद कुछ बचता ही नहीं है- जैसे चार्वाक्, वाममार्गी, नास्तिक लोग हैं, जो यह मानते हैं कि यह शरीर ही जीवन है और इस शरीर के आगे-पीछे कुछ भी नहीं है। **यावत् जीवेत् सुखं जीवेत्, ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्, भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।** वो कहते हैं, इस शरीर को ही जितना सुख देना है दे लो। यह शरीर ही वास्तविकता है। इस शरीर के समाप्त होने पर कुछ भी शेष नहीं रहता। ऐसा जो मानने वाले हैं उनकी दृष्टि में शरीर के साथ सब कुछ नष्ट हो जाता है। किन्तु समस्या क्या पैदा होती है कि यदि शरीर ही सब कुछ और अन्तिम है तो सबका शरीर पहली बार बन रहा है, बिना किसी भेदभाव के है, तो ऐसी स्थिति में शरीर तो सबका समान होना चाहिए। यहाँ तो मनुष्य का क्या, एक माता-पिता के सन्तान भी समान नहीं होते, एक घर में रहने वाले पति-पत्नी भी समान नहीं होते, सन्तान माता-पिता के अनुकूल नहीं होते, अच्छे कहे जाने वाले माता-पिताओं की सन्तान संस्कारी नहीं होती। जिन माता-पिताओं को दुर्जन कहते हैं, दोषी कहते हैं, बुरा कहते हैं, उनकी सन्तान उनके विपरीत मिलती है। यह जो भिन्नता है, यह हमको बताती है कि यह सब कुछ बिना कारण नहीं हो रहा है। इस सबके पीछे कोई कारण है। एक मनुष्य कुछ कम करके भी अधिक फल पा रहा है और एक बहुत अधिक प्रयत्न करने के बाद भी फल नहीं पा पाता या थोड़ा पाता है, ऐसा क्यों? तो पता यह लगता है कि वर्तमान का ही सब कुछ नहीं है और यदि वर्तमान का मानते तो जन्म के साथ भिन्नता नहीं होनी चाहिए थी। जन्म के साथ तो सब एक जैसे होते, माता-पिता भी एक जैसे होते, उनके सुख-दुःख शरीर, रोग, शोक एक जैसे होते, लेकिन ऐसा नहीं मिलता। इससे यह पता लगता है कि यह भिन्नता जिस कारण से है, वो एक ही चीज हो सकती है जिसका फल मिलता है। हमने कुछ किया है तो हमें कुछ मिलता है यदि हम उसको अच्छा या बुरा कहते हैं तो हमें यह मानना पड़ता है कि हमने अच्छा किया है इसलिए अच्छा मिला और यदि हमने गलत किया, बुरा किया तो बुरा मिलेगा। यह सिद्धान्त अपने आप हमारे सामने आ जाता है और यदि यह सिद्धान्त हमारे सामने आ जाता है तो फिर मनुष्य के जीवन में एक निर्णय करने का क्षण आता

है कि उसे कौन सा काम करना चाहिए, कौन सा नहीं करना चाहिए, क्योंकि एक सिद्धान्त बन गया कि कर्म करेगा तो उसका फल अवश्य मिलेगा और क्योंकि काम अलग- अलग हैं तो फल भी अलग-अलग होंगे। उनमें कुछ अच्छे हैं तो उनके फल भी अच्छे होंगे और यदि कुछ बुरे हैं तो उनका फल भी बुरा होगा।

यह सिद्धान्त जब हमारे सामने स्पष्ट हो जाता है तो मृत्यु हमारे लिए और अधिक समझने की चीज़ बन जाती है और उस समय में हमको यह जानना होता है कि इस समय हम मृत्यु के बाद किन परिस्थितियों की ओर बढ़ रहे हैं। इसको जानने के लिए हमारे ऋषियों ने एक सिद्धान्त बनाया कि आपकी उस समय मानसिक दशा कैसी है। इस शरीर से जीवात्मा का निष्क्रमण किस तरह से हुआ है? आप जिस समय प्राण छोड़ रहे हैं, उस समय आपकी मनोदशा सात्त्विक है, राजसिक है, तामसिक है।

ऐसा क्यों होता है, क्योंकि जब हमने यह सिद्धान्त स्वीकार कर लिया कि मनुष्य जो करता है उसके अनुसार उसका फल मिलता है तो यहाँ एक संकट और आता है- क्या जो कुछ हमने अभी किया है, उसका फल अभी मिलता है, इसी जीवन में मिलता है? यदि ऐसा सिद्धान्त होता तो हमें वो नहीं मिलना चाहिये जो इस जीवन में हमने किया नहीं।

बहुत बार हमको बहुत दु:ख मिलते हैं और हम यह कहते हैं, देखो हमने तो जीवन में कभी किसी का बुरा नहीं किया, हमने कभी कोई बुरा काम नहीं किया, लेकिन भगवान् हमको बहुत दु:ख दे रहा है। अनुभव यह कहता है कि हमने इस जीवन में यदि बुरा नहीं किया है और कोई कष्ट या दु:ख या कोई फल हमें प्राप्त हो रहा है तो वह इस जन्म का न होकर के किसी दूसरे जन्म का होगा क्योंकि बिना किए तो मिलता नहीं है और इस जन्म में हमने किया नहीं है और मिल रहा है तो यह सहज हमको स्वीकार करना पड़ता है कि हमने पहले किया है। जब पहले बुरा किया है तो बुरा मिल रहा है तो इसका दूसरा परिणाम सहज निकलेगा कि हम अच्छा करेंगे तो अच्छा मिलेगा। अच्छे और बुरे की परिभाषा के लिए हम स्वत: प्रमाण होते हैं। जो काम हमको अच्छा लगता है, लाभ देता है, सुख देता है वो हमारे लिए अच्छा होता है। हम उन कर्मों को वर्तमान में भी होते हुए देखते हैं कि जैसे अभी किसी कर्म का अभी फल मिला, तो जिस कर्म का फल अच्छा मिला हमको वो कर्म अच्छे की कोटि के लगते है, और ऐसे कर्मों को करने की हम प्रेरणा देते हैं और जिन कर्मों को करने से कष्ट होता है, दु:ख होता है वो हमको बुरे लगते हैं। इस गंभीर चर्चा को इस मृत्यु के माध्यम से समझ सकते हैं, यह इस मन्त्र में बताया गया है।

दयानन्द धर्मार्थ चिकित्सालय

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित ऋषि उद्यान में वर्ष २०१२ से आयुर्वेदिक चिकित्सालय चल रहा है। चिकित्सालय में उपलब्ध सभी औषधियाँ नि:शुल्क दी जाती हैं। डॉ. रमेश मुनि जी चिकित्सक के रूप में इस चिकित्सालय का कुशलतापूर्वक कार्यभार सम्भाल रहे हैं। चिकित्सालय का समय प्रात: ९ से ११ बजे तक है। रविवार का अवकाश होता है।

दानी महानुभावों से सहयोग की भी अपेक्षा है।

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में
१३५ वाँ ऋषि बलिदान समारोह

दिनांक १६, १७, १८ नवम्बर २०१८, शुक्र, शनि, रविवार

महापुरुषों का यज्ञमय जीवन हमको प्रत्येक कदम पर प्रेरणा व मार्गदर्शन देता रहता है, जिस कारण हम उनके ऋणी हो जाते हैं। इस ऋण से मुक्त होने का एक ही उपाय है- महापुरुषों की विचारधारा का यथासामर्थ्य प्रचार-प्रसार। विराट व्यक्तित्त्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण को चुकाने का स्वर्ण-अवसर ऋषि के १३५वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है।

ऋग्वेद पारायण यज्ञ- 'ऋग्वेद पारायण यज्ञ' की पूर्णाहुति बलिदान समारोह के अन्तिम दिन १८ नवम्बर को प्रात: १० बजे होगी। यज्ञ के ब्रह्मा आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् डॉ. विनय विद्यालंकार होंगे।

वेदगोष्ठी - प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ दिल्ली एवं अनुसन्धान केन्द्र परोपकारिणी सभा के संयुक्त प्रयास से वेदगोष्ठी का आयोजन किया जायेगा। इस गोष्ठी में देश के विविध विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है- **षड्दर्शनों की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द।** जो विद्वान् गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं, वे १० नवम्बर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। १६, १७, १८ नवम्बर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण वेद प्रतियोगिता- प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में २१ वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गत वर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। १६ नवम्बर को परीक्षा एवं १७ नवम्बर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर २-छायाचित्र सहित अपना परिचय १० नवम्बर, २०१८ तक आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर के पते पर भेज दें।

सम्मान - प्रतिवर्ष विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को इस समारोह में सम्मानित किया जाता है। इस वर्ष भी सम्मान -समारोह होगा। जिसमें अनेक विद्वान्-विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को सम्मानित किया जायेगा।

नवम्बर के आरम्भ में अजमेर में हल्की ठंड होने लगती हैं, ऋषि उद्यान खुले में होने से सर्दी का प्रभाव कुछ अधिक रहेगा। रात्रि में कम्बल ओढ़ने जैसी ठण्ड रहेगी। जो समूह में रहना चाहते हैं उनकी निवास व्यवस्था ऋषि उद्यान में होगी और जो अपने निवास की व्यवस्था होटल-धर्मशाला में करवाना चाहते हैं, कृपया वे सभा कार्यालय से पूर्व सम्पर्क कर अग्रिम राशि जमा करवा कर कमरा आरक्षित करवा लें। सभी से विशेष निवेदन है कि अपने आने की सूचना कम से कम एक सप्ताह पूर्व दे देवें, जिससे संख्या का अनुमान होकर तदनुसार व्यवस्था की जा सके। सभी से निवेदन है कि १३५वें बलिदान समारोह में अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकत्ताओं सहित पधार कर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें, महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा उत्साह प्राप्त कर प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

ऋषि मेले में आमन्त्रित विद्वान् एवं विशिष्ट अतिथि- प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु-अबोहर, श्री सुरेश अग्रवाल-प्रधान सार्वदेशिक सभा, श्री सत्यपालसिंह-केन्द्रीय शिक्षा राज्यमन्त्री, डॉ. ब्रह्ममुनि-महाराष्ट्र, श्री सोमपाल शास्त्री- पूर्व केन्द्रीय कृषि मन्त्री, श्री अरुण कुमार 'आर्यवीर', श्री जगदीश शर्मा-जयपुर, श्री शिवकुमार चौधरी-इन्दौर, श्री जयदेव आर्य-राजकोट, श्री ठा. विक्रमसिंह-दिल्ली, श्री प्रकाश आर्य-महू, श्री प्रियव्रतदास एवं श्रीमती शन्नो देवी-भुवनेश्वर, श्री विद्यामित्र ठुकराल-दिल्ली, श्री ओमप्रकाश गोयल-पानीपत, श्री हरिसिंह सैनी-हिसार, आचार्य विजयपाल-झज्जर, श्री सज्जनसिंह कोठारी-लोकायुक्त जयपुर, श्री विजयसिंह भाटी-जोधपुर, श्री इन्द्रजित् देव-यमुनानगर, आचार्य विद्यादेव, डॉ. सोमदेव 'शतांशु'-गुरुकुल काँगड़ी, डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार-कुरुक्षेत्र, पं. रामनिवास गुणग्राहक-श्रीगंगानगर, डॉ. विनय विद्यालंकार-प्रधान आ.प्र.स. उत्तराखण्ड, डॉ. कृष्णपाल सिंह-जयपुर, डॉ. मुमुक्षु आर्य-नोएडा, डॉ. प्रशस्यमित्र शास्त्री- रायबरेली, डॉ. रघुवीर वेदालंकार-दिल्ली, स्वामी ऋतस्पति-होशंगाबाद, डॉ. वेदपाल-मेरठ, आचार्या सूर्या देवी-शिवगंज, आचार्या धारणा 'याज्ञिकी', आचार्या प्रियम्वदा 'वेदभारती'-आर्ष कन्या गुरुकुल नजीबाबाद, श्री तपेन्द्र वेदालंकार-(रि. आई.ए.एस.) जयपुर, आचार्य विरजानन्द दैवकरणि-झज्जर, श्री कन्हैयालाल आर्य-गुरुग्राम, डॉ. वेदप्रकाश 'विद्यार्थी'-दिल्ली, आचार्य ओम्प्रकाश-आबूपर्वत, मा. रामपाल आर्य-प्रधान आ.प्र.स. हरियाणा, श्री उमेद शर्मा-मन्त्री आ.प्र.स. हरियाणा, डॉ. महावीर मीमांसक-दिल्ली, श्री विजय शर्मा- भीलवाड़ा, श्री दीनदयाल गुप्त-कोलकाता, श्री शत्रुघ्न आर्य-राँची, श्री सत्यानन्द आर्य-दिल्ली, डॉ. जगदेव-रोहतक, डॉ. रमेशचन्द्र 'जीवन'- चण्डीगढ़, पं. देवनारायण तिवारी-कोलकाता, पं. सत्यपाल पथिक, पं. भूपेन्द्र सिंह आदि।

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा '८०-जी' के अन्तर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप कर मुक्त होगा। विदेश में निवास कर रहे धर्मप्रेमी सज्जन स्वदेश में होने वाले इस समारोह हेतु मुक्त हस्त से दान देकर देश का गौरव बढ़ाएँ। सभा को भारतीय शासन द्वारा विदेशों से दानस्वरूप दी गई राशि को प्राप्त करने की छूट प्राप्त है। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। शुभकामनाओं सहित।

गजानन्द आर्य	**डॉ. सुरेन्द्र कुमार**	**ओम् मुनि**
संरक्षक	**कार्यकारी प्रधान**	**मन्त्री**

कुछ तड़प–कुछ झड़प

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

ऋषि का बोलबाला- एक से अधिक बार यह लेखक ऋषि-जीवन की महात्मा हंसराज जी द्वारा कथित यह घटना लिख चुका है। महर्षि जी का ईश्वर की सत्ता व स्वरूप पर व्याख्यान सुनकर लाहौर में सभास्थल से घरों के लिये निकलते हुये श्रोता उसी व्याख्यान की चर्चा करते जा रहे थे। तब एक ब्राह्मसमाजी नेता की उस व्याख्यान पर सबसे निराली प्रतिक्रिया थी। उसने साथियों से कहा, ''मेरा तो अब तक का सारा जीवन व्यर्थ ही गया।'' मित्रों ने उसे पूछा, ''ऐसा क्यों?''

उसने कहा, ''मैंने तो कभी भी ईश्वरेतर पूजा का (मूर्ति, कब्र, नदी, नाले, पर्वत) ऐसा कड़ा खण्डन नहीं किया जैसा आज ईश्वरेतर उपासना का स्वामी दयानन्द जी ने किया है।'' महात्मा हंसराज जी ने यह प्रसंग लाला साईंदास के मुख से सुना था, परन्तु आपने उस ब्राह्मसमाजी नेता के नाम का उल्लेख नहीं किया। हम अनुमान प्रमाण से ऐसा मानते हैं कि यह पंजाब ब्राह्मसमाज के प्रधान लाला काशीराम जी ही हो सकते हैं। आप पं. लेखराम जी के बड़े प्रशंसक व मित्र थे। ऋषि का गुणगान करने में कंजूस नहीं थे।

आर्यसमाज में कई व्यक्तियों को मैं जानता हूँ जो एक लम्बे समय तक निब घिसाते रहे, परन्तु जीवन भर कभी भी परकीय मतों व पौराणिकों के किसी लेख, पुस्तक अथवा व्याख्यान के प्रतिवाद में न कभी कोई लेख लिखा और न व्याख्यान दिया। मुसलमानों व ईसाइयों के मत पर कोई पुस्तक लिखने का तो प्रश्न ही नहीं उठता। मत-पंथों की आज सोच बदली है और वे वैदिक धर्म की चौखट पर खड़े होने लगे तो इसका श्रेय प्राणवीर पं. लेखराम जी, स्वामी योगेन्द्रपाल, पं. रामचन्द्र देहलवी और स्वामी दर्शनानन्द की परम्परा के विद्वानों को प्राप्त है।

स्वर्ग, नरक (Hell and Heaven) की चर्चा आज भी ईसाई, मुसलमान तथा सनातनी पौराणिक लेखनी व वाणी से खूब करते हैं। कोलकाता से कभी “Epiphany Weekly” नाम का एक ईसाई पत्र निकला करता था। इसमें नरक क्या है? स्वर्ग क्या है? विषय पर ये पंक्तियाँ छपीं थीं, ''Hell and Heaven are spiritual states. Heaven is the enjoyment of the presence of god, and Hell banishment from it.''

अर्थात् नरक तथा स्वर्ग आत्मा की दो अवस्थायें हैं (स्थान विशेष particular region नहीं) स्वर्ग प्रभु की समीपता के आनन्द की अवस्था है तथा नरक आत्मा में ईश्वर की अनुपस्थिति (अविश्वास) की अवस्था का नाम है।

पाठकवृन्द! महर्षि के **स्वमन्तव्य अमन्तव्य** में नरक स्वर्ग की परिभाषा की इससे बढ़िया व्याख्या आप और क्या करेंगे? आज भी किसी पादरी से, बिशप से पूछिये कि आपको यह व्याख्या किसने सिखाई, समझाई? वह झट से कहेगा, जिससे आपने सीखी।

ईश्वरीय ज्ञान का अविर्भाव- विज्ञान का प्रत्येक विद्यार्थी यह मानता है, जानता है व कहता है कि सृष्टि-नियम सार्वभौमिक हैं, (universal) और अनादि व नित्य (eternal) हैं। इनसे पूछो कि अग्नि कब से जलाती है? जल कब से नीचे को बहता है? वैज्ञानिक जगत् पुकार उठेगा, जब से सृष्टि है तब से यह नियम कार्य कर रहा है और सदा-सदा के लिये है।

इस पर प्रश्न उठता है कि विश्व कल्याण के आत्म-शान्ति के सिद्धान्त क्या समय-समय पर बदल-बदल कर परमात्मा लागू करता है? मुँह से कुछ कहें या न कहें पर सब मतवादी हृदय से यही मानते हैं कि ईश्वर के सब उपदेश, आदेश और नियम भी नित्य व अनादि हैं। ये समय के साथ नहीं बदलते।

ऋषि के शास्त्रार्थ पढ़िये, ऋषि के जीवन-चरित्र को पढ़िये और ऋषि का साहित्य पढ़िये। आप इन सब में नित्य, अनादि, अटल व सार्वभौमिक शब्द बार-बार पायेंगे। किसी भी मत-पंथ के ग्रन्थ में इनका ऐसा प्रचुर प्रयोग नहीं पायेंगे।

आधुनिक काल में यह अटल नियम स्वामी दर्शनानन्द आदि आर्ष दार्शनिकों ने संसार को सुझाया व समझाया कि मनुष्य आवश्यकता पड़ने पर आविष्कार करता है परन्तु सर्वज्ञ प्रभु आविष्कार पहले करता है, आवश्यकता बाद में पड़ती है यथा मनुष्य को धूप ने सताया तो छाता बना, काँटा पाँव में चुभा तो जूता बनाया गया, परन्तु सूर्य पहले निर्मित हुआ आँखों से देखने वाले प्राणी बाद में उत्पन्न किये गये। फल, फूल व वनस्पतियाँ मनुष्यों की, प्राणियों की उत्पत्ति से पहले उगाये गये। जल, अग्नि और वायु का उपयोग उपभोग करने वाले बाद में जन्मे। जल, अग्नि और वायु प्रभु ने पहले बना दिये।

पं. लेखराम, ठाकुर अमरसिंह और पं. शान्तिप्रकाश जी ने संसार को सुझाया बताया कि इसी रीति से आत्मोन्नति व आत्मशक्ति के लिये परमात्मा ने अपने सद्ज्ञान का आविर्भाव सृष्टि के आदि में किया, न कि बाद में।

Necessity is the mother of invention. आवश्यकता अविष्कार की जननी है यह मनुष्य सृष्टि का नियम है। आविष्कार पहले, सृष्टि की, प्रजा की उत्पत्ति पीछे यह प्रभु का नियम है। मनोविज्ञान Science of Mental Events भी Cognition (ज्ञान) को पहले Conation क्रिया को तत्पश्चात् मानता है।

मत पंथों को भी विवश होकर अब सृष्टि के आदि में ईश्वरीय ज्ञान के आविर्भाव का सिद्धान्त किसी न किसी रूप में मानना पड़ रहा है। इस्लाम में लोहे महफ़ूज (अमर पट्टी) व 'उम-उल किताब' (पुस्तकों की माता) की याद कब आई? जब 'वरदा वेदमाता' की ज्ञान-राशि का जयकार करते हमारे नित्यानन्द, गणपति शर्मा मैदान में उतरे। भले ही हिंसा व मतान्धता ने मतवादियों को अन्धा कर रखा है, परन्तु वह दिन दूर नहीं जब 'अल्लाह की आदत' को पूरा-पूरा समझ कर इस्लाम में कोई नया महबूब अली आगे निकलेगा, जो यह सन्देश सुनाकर सन्मार्ग दर्शन करेगा कि जब अल्लाह के गुण, कर्म व स्वभाव (आदत) नित्य व अनादि हैं तो उनका ज्ञान नया व पुराना कैसे? वह भी न मरता है न बूढ़ा होता है। यह तभी सम्भव होगा जब पं. लेखराम की तड़प आर्यमात्र को तड़पायेगी।

मिशन की तड़प- पं. लेखराम जी कभी कमालिया (पश्चिमी पंजाब) प्रचारार्थ गये। तब कमालिया कोई बड़ा नगर नहीं, एक कस्बा था। भूमण्डल प्रचारक मेहता जैमिनि तब ट्रेनिंग कॉलेज की परीक्षा देकर अपने घर गये हुये थे। लाहौर में आप पण्डित जी के निकट आ चुके थे। पंडित जी ने जैमिनि जी से कहा कि यहाँ तो रात्रि को ही व्याख्यान होगा। अच्छा होगा कि दिन को हम किसी समीपवर्ती ग्राम में प्रचारार्थ हो आवें। जैमिनि जी ने कहा, यहाँ से चार मील की दूरी पर जाखड़ियाँ नाम के ग्राम में प्रचार हो सकता है।

पंडित जी ने कहा, हम भोजन करके वहाँ प्रचारार्थ चलेंगे। जैमिनि जी ने कहा, वहाँ प्रचार की व्यवस्था कौन करेगा? पण्डित जी ने कहा, हम किसी मुहल्ला या बाजार में कहीं खड़े होकर प्रचार करेंगे। ग्राम में पहुँचकर उन्होंने एक पीपल के वृक्ष के नीचे खड़े होकर ईश्वर-भक्ति पर सारगर्भित व्याख्यान दिया।

वहाँ से लौटते हुये अपने झोले से भुने हुये चने निकालकर जैमिनि जी को भी दिये और आप भी खाये। कहा, अब रात्रि कमालिया जाकर व्याख्यान देंगे।

लायलपुर में या मुलतान में वकालत करते समय एक बार जैमिनि जी ने हरियाणा के राजकवि रहे जैमिनि 'सरशार' के ग्राम में प्रचारार्थ पहुँचने का कार्यक्रम बनाया। वहाँ के आर्यों की आपके प्रति विशेष श्रद्धा थी। वहाँ पहुँचने के लिये कई मील पैदल भी चलना पड़ता था। आपका नया देसी जूता बहुत काटता था। आप जूता उतारकर उसे हाथ में लेकर पैदल चलकर वहाँ पहुँच गये। आपको इस स्थिति में देखकर वहाँ के आर्य दंग रहे गये। इसी तपस्या का फल था कि श्री जैमिनि 'सरशार' के जन्म पर उन्हें आपका नाम दिया गया। वहाँ और भी कई आर्यों ने अपने पुत्रों का नाम जैमिनि रखा। पूज्य महात्मा आनन्द भिक्षु जी महाराज भी उधर के ही थे। आपने भी अपने ज्येष्ठ पुत्र का नाम 'जैमिनि' (देहली वाले पं. जैमिनि शास्त्री) रखा।

ऐसी तड़प, ऐसी लगन का लोप न होने पावे।

जब देहलवी जी पैदल चल पड़े- इस सेवक को कादियाँ के रेलवे स्टेशन पर पं. रामचन्द्र जी देहलवी ने आगे की घटना सुनाई। पण्डित जी को विधर्मियों से शास्त्रार्थ

के लिये उ.प्र. के एक दूरस्थ ग्राम में तार देकर बुलाया गया। वहाँ जाने के लिये रेल से उतरकर कई मील पैदल चलना पड़ता था। पण्डित जी गाड़ी से उतरे। वहाँ तक ले जाने वाला कोई व्यक्ति नहीं था, जाने का कोई साधन भी नहीं था।

लोगों ने बताया कि रेलवे लाइन के साथ-साथ बस अगला ही स्टेशन है। शास्त्रार्थ का समय होने ही वाला था। पण्डित जी ने अपना जूता उतारकर हाथ में ले लिया और दौड़ लगाते, समय पर उस ग्राम में पहुँच गये। टकटकी लगाये उधर से आर्यसमाज के दीवाने अपने पूजनीय देहलवी जी की प्रतीक्षा कर रहे थे। दूर से दौड़ लगाते पण्डित जी को आते देखा तो आर्यवीर झूम उठे। वैदिक धर्म की जय के जयकारों से सारा क्षेत्र झूम उठा। शास्त्रार्थ में विजयी रामचन्द्र जी का आर्येतर श्रोताओं पर भी गहरा प्रभाव पड़ा, परन्तु दौड़ लगाकर वैदिक धर्म का डंका बजाने-पहुँचने वाले पं. रामचन्द्र देहलवी का प्रभाव उससे भी कहीं अधिक गहरा पड़ा। आप अनुमान ही लगा सकते हैं।

फिर किसी ने सुधी ही न ली- आर्यसमाज सान्ताक्रुज मुम्बई की स्वर्ण जयन्ती पर वहाँ बीकानेर से पधारे आर्य पुरुष चौधरी बलबीर सिंह जी ने मुझसे पूछा, ''आपका साथी अशोक आर्य कौन है?'' मैंने पूछा, ''आप किसलिये उनके बारे पूछ रहे हैं?''

उन्होंने कहा राजस्थान की सीमा पर आपके अबोहर क्षेत्र का कोलार नाम का जो ग्राम है। मेरे बेटे की ससुराल वहाँ है। मैं वहाँ उनके बुलाने पर पहुँचा तो पता चला कि यहाँ इतने बड़े ग्राम में आर्यसमाज नहीं है। बिरादरी के बहुत से जाट भाई वहाँ बैठे थे। चौधरी बलवीर सिंह जी ने अपने क्षत्रिय स्वभाव के अनुसार बड़े जोश से कहा, ''यह तो बड़ी लज्जाजनक बात है कि जाटों के इतने बड़े ग्राम में आर्यसमाज नहीं है।''

चौधरी जी का जोश देखकर गाँव के बड़े-बड़े चौधरियों ने कहा, ''हमारे लिये तो आर्यसमाज मर गया और हम आर्यसमाज के लिये मर गये। जिज्ञासु जी श्री अशोक आर्य को साथ लेकर यहाँ आकर प्रचार करते-करवाते थे। अब उग्रवाद के कारण (तब बहुत उग्रवाद था) पंजाब से कोई एक-आध बस ही कभी आती है सो उनका आना नहीं होता। इधर साथ लगते राजस्थान से प्रचारार्थ कोई आता ही नहीं। जिज्ञासु जी और अशोक जी विवश हैं।''

एक नये आर्यसमाजी युवक की पीड़ा- किसी पिछले अंक में मैं एक परमोत्साही आर्य युवक का संकेत दिया था। अभी उसका अता-पता बताना ठीक नहीं। परोपकारी के उस दीवाने पाठक ने इस सेवक से प्रश्न पूछा,''विदेश से नेट पर मिर्ज़ाई लोग (जिन्हें पाकिस्तान में काफ़िर घोषित कर दिया गया है) पं. लेखराम जी के बारे में बड़ा विषैला व घृणित प्रचार कर रहे हैं। पण्डित जी का अन्त समय का उनका चित्र देकर दिल को दुखाने वाले शब्दों में उनकी मृत्यु पर भद्दी भाषा में टिप्पणी की जाती है। आर्यसमाज उत्तर क्यों नहीं देता? मिर्ज़ाइयों द्वारा मीडिया पर पण्डित लेखराम जी के सम्बन्ध में किस भाषा में क्या-क्या कहा जाता है, उस दुष्प्रचार के बारे में उत्तर पाने के लिये उस नये आर्यसमाजी बने मेधावी युवक ने कई प्रश्न पूछे।''

आश्चर्य की तथा गौरव की बात तो यह है कि परोपकारी में तड़प-झड़प पढ़ते-पढ़ते नये बने आर्यवीर के मन में इस दुष्प्रचार का उत्तर देने के लिये इतना उत्साह है, परन्तु किसी नेता व पुराने आर्यसमाजी ने इस विषय में कभी चिन्ता नहीं जताई। इतना बताना आवश्यक है कि विदेश से छेड़े गये इस मिर्ज़ाई अभियान की सूचना हमें सबसे पहले श्री लक्ष्मण जी 'जिज्ञासु' तथा लखनऊ के कुछ आर्य युवकों ने दी थी। लखनऊ वालों ने उनके विषैले प्रचार का उत्तर देने की प्रबल माँग की। यह भी कहा कि सप्रमाण और ओजस्वी भाषा में एक पुस्तक लिखें। हम प्रसार में सहयोग करेंगे। हमने रक्तसाक्षी ग्रन्थ में सब आपत्तिजनक बातों के उत्तर देकर मिर्ज़ाइयों को प्रत्युत्तर देकर घेरा भी खूब है। लखनऊ वालों को ग्रन्थ के छपते ही सूचना दे दी। न जाने वे क्यों चुप्पी साध गये।

अब कुल्लियात का सम्पादन करते हुये पाद टिप्पणियों में भी उनके दुष्प्रचार का संकेत करते हुये मुख्य-मुख्य आक्षेपों के उत्तर भी कुल्लियात में दिये हैं। आर्यों ने रक्तसाक्षी पं. लेखराम के प्रचार-प्रसार में कुछ किया नहीं, स्वयं उत्तर देने की किसी में न चाह है और न अध्ययन है।

वह नया आर्यवीर रक्तसाक्षी पं. लेखराम ग्रन्थ ले गया

है। उसे कहा है कि कुल्लियात अति शीघ्र प्राप्य होगी। वह स्वयं न ले सकेगा तो किसी धर्मात्मा सज्जन से दिलवा देंगे। उनके आक्षेप सुनिये-

१. पं. लेखराम जी ने बहुत भद्दी भाषा में हमारा खण्डन किया है। गालियाँ दी हैं।

हमारा निवेदन है कि पण्डित लेखराम ने कहीं भी एक भी असंसदीय शब्द का प्रयोग नहीं किया। मिर्जा ने वर्णानुक्रम से अलिफ़ से लेकर ये (य) तक असंख्य गालियाँ अपने विरोधियों की दी हैं जो मुस्लिम मौलवियों की पुस्तकों में संग्रहीत हैं। अजमेर परोपकारिणी सभा में ऐसा साहित्य दिखाया जा सकता है। 'वल्दउलज़ना' शब्द के अर्थ हम परोपकारी में नहीं दे सकते। यह इतनी गन्दी गाली मौलवियों को, पादरियों को, हिन्दुओं को विशेष रूप से आर्यों को दी गई है। सरकार ने सात बार अभियोगों में जाँच करके पण्डित जी के साहित्य में एक भी गाली न पाई।

२. मिर्ज़ाई नबी ने देश के क्रान्तिकारियों को 'नमक हराम' तक लिखा है। क्या यह गाली नहीं? सूफ़ी अम्बाप्रसाद, वीर अजीत सिंह और लाला लाजपतराय तथा लोकमान्य तिलक क्या 'नमकहराम' थे?

३. पं. लेखराम पर कुरान की आयतों के गन्दे-गन्दे अर्थ करने का दोष लगाया है।

हमारा उत्तर यह है कि पण्डित जी ने कुरान की एक भी आयत का, सूरत का, पारे का अनुवाद नहीं किया। उन्होंने तो कुरान की प्रसिद्ध तफ़सीरों के ही अर्थ अपने ग्रन्थों में दिये हैं। क्या मिर्ज़ाई तफ़सीरे हुसैनी व शाह अब्दुल कादिर, शाह रफ़ीउद्दीन आदि के अर्थों को गन्दा मानते हैं?

पं. लेखराम जी के बलिदान होने पर लिया गया ग्रुप फोटो दिखाकर यह भी कहते हैं कि उसका एक ही पुत्र था सो वह भी मर गया। लेखराम लावल्द के मरा। उसका वंश ही नहीं रहा।

तो मिर्ज़ाई बतायें जो देश-धर्म के लिये शहीद होते हैं उनके मानसपुत्र क्या उनका वंश नहीं? क्या मुहम्मद साहिब के मानने वाले उनकी उम्मत (वंश) नहीं? बेटा इब्राहिम तो उनका इकलौता पुत्र था वह उनके जीते जी चल बसा। मुहम्मद साहब के लिये वही शब्द कहकर दिखाओ जो पं. लेखराम के लिये लिखते व कहते हो।

गुरु गोविन्दसिंह जी ने चारों लाल देश पर वार दिये। हमें गौरव है कि हम सब उनके वंशज हैं। कहो! क्या कहते हो।

५. **''लेखू मरा था कटकर जिसकी दुआ से आख़िर''**

इस गन्दी पंक्ति में पं. लेखराम जी को तुम्हारे नबी ने 'लेखू' लिखकर अपनी सभ्यता का परिचय दिया है।

६. पण्डित जी के बलिदान के लम्बे समय पश्चात् हमने अपने ग्रन्थ में व कुल्लियात में पण्डित जी के बलिदान का ग्रुप फोटो गौरव से दिया है। आप मिर्ज़ा के ग्रन्थ में तथा नेट में उनका चित्र दिखाकर संसार को यह दिखाना चाहते हैं कि आपके नबी ने छल-कपट से षड्यन्त्र रचकर पं. लेखराम जी की हत्या करवा दी थी।

बोली खंजर की धार, फूले उसका परिवार।
गावे सारा संसार, उसकी जय-जयकार।।

टिप्पणी

१. द्रष्टव्य- २५-०२-१९३९ के Epiphany weekly के अंक से।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

ओ३म्

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर (राज.) पिन. ३०५००१ दूरभाष– ०१४५–२४६०१६४

वेदगोष्ठी–२०१८

मान्यवर सादर नमस्ते।

आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ सानन्द होंगे। आपको सुविदित है कि सद्भावी विद्वानों के सहयोग से सदा की भांति इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ, दिल्ली तथा अनुसंधान विभाग परोपकारिणी सभा, अजमेर के संयुक्त तत्त्वावधान में ऋषि मेले के अवसर पर वेदगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। इस गोष्ठी में देश के अनेक भागों से पधारे प्रख्यात वैदिक विद्वान् निर्धारित विषयों पर अपने शोधपूर्ण विचार प्रस्तुत करते हैं। इनमें से चुने हुए शोध–पत्र परोपकारी व वेदपीठ की शोध–पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित किये जाते हैं। जिससे जो लोग गोष्ठी में नहीं आ सकते वे भी लाभान्वित होते हैं। विद्वानों को भी इस विषय पर अधिक विचार करने का अवसर मिलता है। गत ३० वर्षों से गोष्ठी का आयोजन निरन्तर किया जा रहा है। अब तक निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार किया जा चुका है:–

१. ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली।	**१२ नवम्बर, १९८८**
२. वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग।	**०५ नवम्बर, १९८९**
३. अथर्ववेद समस्या और समाधान।	**२७ नवम्बर, १९९०**
४. वेद और विदेशी विद्वान्।	**१६ नवम्बर, १९९१**
५. वैदिक आख्यानों का वास्तविक स्वरूप।	**०१ नवम्बर, १९९२**
६. वेदों के दार्शनिक विचार।	**२८ नवम्बर, १९९३**
७. सोम का वैदिक स्वरूप।	**१२ नवम्बर, १९९४**
८. पर्यावरण समस्या का वैदिक समाधान।	**०३ नवम्बर, १९९५**
९. वैदिक समाज व्यवस्था।	**०१ नवम्बर, १९९६**
१०. वेद और राष्ट्र।	**२४ अक्टूबर, १९९७**
११. वेद और विज्ञान।	**०९ अक्टूबर, १९९८**
१२. वेद और ज्योतिष।	**१० नवम्बर, १९९९**
१३. वेद और पदार्थ विज्ञान	**०३ नवम्बर, २०००**
१४. वेद और निरुक्त	**१८ नवम्बर २००१**
१५. वेद में इतिहास नहीं	**०१ नवम्बर २००२**
१६. वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	**३१ अक्टूबर २००३**
१७. वेद में शिल्प	**१९ नवम्बर २००४**
१८. वेदों में अध्यात्म	**११ नवम्बर, २००५**
१९. वेदों में राजनीतिक चिन्तन	**२७ नवम्बर, २००६**
२०. वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है	**१६ नवम्बर, २००७**
२१. वैदिक समाज विज्ञान	**०५ नवम्बर, २००८**
२२. सत्यार्थप्रकाश का ७ वाँ समुल्लास व वेद	**२३ अक्टूबर, २००९**
२३. सत्यार्थप्रकाश का ८ वाँ समुल्लास व वेद	**१२ नवम्बर, २०१०**
२४. सत्यार्थप्रकाश का ९ वाँ समुल्लास व वेद	**०४ नवम्बर, २०११**
२५. महर्षिदयानन्दाभिमत मन्तव्यः वैदिक परिप्रेक्ष्य	**१६ नवम्बर, २०१२**
२६. वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास	**८ नवम्बर, २०१३**
२७. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	**३१ अक्टू. १,२ नव., २०१४**
२८. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	**२०,२१,२२ नव., २०१५**
२९. दयानन्द दर्शन की वेदमूलकता	**४,५,६ नव., २०१६**
३०. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त	**२७,२८,२९ अक्टू., २०१७**

।।ओ३म्।।

वेद गोष्ठी २०१८ के लिए निर्धारित विषय

षड्दर्शनों की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द

उपशीर्षक :

०१. वेदों में दर्शन तत्त्व की विवेचना
०२. वेदों में षड्दर्शनों के मूलतत्त्व की मीमांसा
०३. महर्षि दयानन्द के चिन्तन में षड्दर्शनों की वेदमूलकता
०४. षड्दर्शनों में ईश्वर-विचार और उनकी वेदमूलकता
०५. षड्दर्शनों में प्रमाण-विचार और महर्षि दयानन्द
०६. षड्दर्शनों में जगत् का सम्प्रत्यय और उसकी वेदमूलकता
०७. षड्दर्शनों में जीव सिद्धान्त या जीवात्मा का सिद्धान्त और महर्षि दयानन्द
०८. षड्दर्शनों की वेदमूलकता और मुक्ति विचार के सन्दर्भ में महर्षि दयानन्द
०९. षड्दर्शनों की वेदमूलकता प्रत्यक्ष प्रमाण के सन्दर्भ में- एक विवेचना
१०. षड्दर्शनों में अनुमान प्रमाण की वेदमूलकता का समीक्षात्मक विशेषण
११. षड्दर्शनों में बन्धन का सिद्धान्त और वेदमूलकता
१२. वेदों के सन्दर्भ में षड्दर्शनों की प्रमुख मान्यताएँ और महर्षि दयानन्द
१३. षड्दर्शनों में मोक्ष प्राप्ति के साधन और महर्षि दयानन्द
१४. षड्दर्शनों में सत् के स्वरूप की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द
१५. षड्दर्शनों में कर्म सिद्धान्त और महर्षि दयानन्द
१६. षड्दर्शनों में पदार्थ विवेचन और महर्षि दयानन्द
१७. षड्दर्शनों में ब्रह्म एवं जीव सम्बन्धों की विवेचना की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द
१८. षड्दर्शनों के समन्वय की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द
१९. षड्दर्शनों में वेद विचार और महर्षि दयानन्द
२०. षड्दर्शनों में त्रैतवाद की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द
२१. महर्षि दयानन्द के अनुसार षड्दर्शनों का समन्वय
२२. वैशेषिक दर्शन की वेदमूलकता
२३. न्याय दर्शन की वेदमूलकता
२४. सांख्य दर्शन की वेदमूलकता
२५. योग दर्शन की वेदमूलकता
२६. मीमांसा दर्शन की वेदमूलकता
२७. वेदान्त दर्शन की वेदमूलकता
२८. वेदान्त दर्शन में वर्णित ब्रह्म के स्वरूप की वेदमन्त्रों से पुष्टि।

सहायक सन्दर्भ ग्रन्थ

०१. षड्दर्शन समन्वय- श्री प्रशान्त आचार्य
०२. आचार्य उदयवीर शास्त्री का षड्दर्शन भाष्य एवं विवेचना ग्रन्थ
०३. योग दर्शन भाष्य-पं. राजवीर शास्त्री
०४. स्वामी ब्रह्ममुनि के दर्शन भाष्य
०५. स्वामी दर्शनानन्द जी के दर्शन भाष्य
०६. भारतीय दर्शन (दो भाग)- डॉ. राधाकृष्णन्
०७. महर्षि दयानन्द सरस्वती के समस्त ग्रन्थ
०८. दर्शन तत्त्व विवेक- आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री
०९. षड्दर्शन समन्वय-पं. विद्यानन्द शर्मा
१०. भारतीय दर्शन का सर्वेक्षण- एम. हिरियन्ना
११. भारतीय दर्शन-एस.एन. दासगुप्त
१२. भारतीय दर्शन-दन्त एवं चटर्जी
१३. भारतीय दर्शन- एन.के. देवराज
१४. भारतीय दर्शन-जी.डी. शर्मा
१५. भारतीय दर्शन-उमेश मिश्र
१६. भारतीय दर्शन-बलदेव उपाध्याय
१७. सिक्स सिस्टम ऑफ इण्डियन फिलॉस्फी- एफ. मैक्समूलर
१८. रिचर्ड गार्वे- सांख्य फिलॉस्फी

संयोजक-डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी

ऐतिहासिक कलम से....

सम्मिलित परिवार, तब और अब

आचार्य उदयवीर शास्त्री

वर्त्तमान युग में सम्मिलित परिवार की चर्चा चलाना कुछ अटपटा-सा लगता है, विशेषकर ऐसे लोगों के बीच, जिन्होंने आधुनिक विदेशी प्रणाली से शिक्षा प्राप्त की है और अपना रहन-सहन उसी के अनुसार बना लिया है तथा उसके अभ्यस्त हो चुके हैं। ऐसे समाज के बीच सम्मिलित परिवार की चर्चा उपहासास्पद मात्र समझी जाएगी। पर भारत में इस प्रथा को चिरकाल तक जीवित-जागृत रखा गया है और अब भी चाहे नागरिक जीवन में इसका अस्तित्व नगण्य-सा रह गया हो, पर भारत के ग्रामीण जीवन में इसका अस्तित्व पाया जाता है और वहाँ इसकी प्रतिष्ठा है। ऐसी स्थिति में इसके गुण-दोषों पर विचार कर लेना उपेक्षणीय न होगा।

वैसे तो प्रत्येक वस्तु व स्थिति में गुण अथवा दोषों की संभावना हो सकती है, पर समाज अपने आचरण में उसी को अपनाता है, जिसमें अधिक गुणों व सुख-सुविधाओं की संभावना हो तथा दोषों, दु:ख व बाधाओं का भय न हो। नागरिक एवं ग्रामीण जनता के निवास व सुख-सुविधा आदि में सदा से थोड़ा-बहुत अन्तर रहता आया है, फिर भी नागरिक परिवारों में पर्याप्त मात्रा में सम्मिलित रहने की प्रथा को प्रतिष्ठा मिली है और इसके महत्त्व को आंका गया है, पर ग्रामीण परिस्थितियों में अनेक कारणों से इस प्रथा को महत्त्व दिये जाने की अधिक आवश्यकता रही है। वे कौन से कारण रहे होंगे, इस पर थोड़ा विचार करना चाहिए।

सम्मिलित परिवार की रूपरेखा- इस पर विचार करने से पहले यह देखना आवश्यक है कि कितनी पीढ़ी तक इकट्ठा रहने वालों को सम्मिलित परिवार कहना ठीक होगा, तदनुसार सम्मिलित परिवार की सीमा-रेखा क्या हो सकती है? किसी भी व्यक्ति की कम-से-कम चौथी पीढ़ी तक इकट्ठा रहते-रहना सम्मिलित परिवार की सीमा समझी जा सकती है, पर वस्तुत: यह सन्तानों की संख्या पर अधिक अवलम्बित है। यदि सन्तान-वृद्धि कम रहती है, तो अनेक पीढ़ियों तक उनका अलग होना या बिखर जाना अनपेक्षित रहता है, ऐसे परिवार सदियों तक सम्मिलित रहते चले जाते हैं। अधिक सन्तान होने पर अलग निवास की आवश्यकता जल्दी अनुभव होने लगती है। यदि किसी व्यक्ति के चार-पाँच पुत्र हो जाते हैं, पुत्रियाँ अलग, उनके फिर इसी तरह आगे सन्तान हो जायें तो चौथी पीढ़ी तक कुछ व्यक्तियों के अलग निवास की अपेक्षा अनुभव होने लगती है। सम्मिलित परिवार का अभिप्राय यही है कि परिवार के समस्त व्यक्तियों की भोजन-आच्छादन आदि सब आवश्यकताओं की पूर्ति एक ही व्यवस्था के अनुसार चलती रहे। ऐसी व्यवस्था में किसी व्यक्ति की निजी महत्त्वाकांक्षा का कोई स्थान नहीं रहता, परिवार के समर्थ व योग्य व्यक्ति अपनी शक्ति व योग्यता के अनुसार परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपेक्षित साधन-सामग्री जुटाने में सहयोग देते हैं, पर समस्त साधनों का उपयोग परिवार के सब व्यक्तियों के लिए सामान्य रूप से वितरित किया जाता है, इसमें प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता का विशेष रूप से ध्यान रखा जाता है।

यह सब वितरण का कार्य ऐसे व्यक्ति पर आधारित रहता है, जो परिवार का वयोवृद्ध हो, अथवा उसकी इस प्रकार की योजना पर सभी साधन-सामग्री जुटाने वाले सहयोगियों का भरोसा हो। ऐसा व्यक्ति परिवार का मुखिया समझा जाता है, वह स्वयं भी पूरे परिश्रम के साथ अपने इस कर्त्तव्य को निभाता हुआ, परिवार के अपेक्षित साधनों के जुटाने में भी अन्य किसी से पीछे नहीं रहता। ऐसी स्थिति में परिवार के किसी अयोग्य व्यक्ति को भी, जो अपनी सामर्थ्य-भर परिवार की आय में थोड़ा-बहुत सहयोग देता है- खाने या पहनने को तथा उसके बच्चों के यथावत् पालन-पोषण एवं दवा-दारु या भोजनाच्छादन आदि के लिए दूसरे योग्य व्यक्ति से कम नहीं मिलता। वस्तुत: इस व्यवस्था में परिवार के सभी व्यक्तियों की कम-से-कम

आवश्यकताओं की पूर्ति समान रूप से बराबर होती है, इसलिए एक-दूसरे के साथ न्यूनाधिक प्राप्ति की तुलना का कोई प्रश्न नहीं उठता। इस प्रकार सम्मिलित परिवार की परिभाषा में एक चूल्हा-चौका का रहना मुख्य आधार है।

सुरक्षा व सहानुभूति- परिवार के ऐसे संघटन में जहाँ आर्थिक पहलू का महत्त्व है, वहाँ परस्पर सहानुभूतिपूर्ण भावनाओं की छाया में प्रारम्भ से ही परस्पर के अंगभूत बच्चों में उन्हीं भावों को जागृत करना और उसके लिए पूर्ण अवसर देना तथा उसके अनुकूल वातावरण बनाये रखना भी एक ऊँचा स्थान रखता है। ऐसी स्थिति में भविष्य में विलगाव की भावनाओं के उभरने का अधिक भय नहीं रहता और परिवार का मूल आधार दृढ़ बना रहता है। इस वातावरण में हर बच्चे की भावनात्मक सुरक्षा का पूरा ध्यान रखा जाता है, उसको यह अनुभव नहीं होने दिया जाता कि किसी अवसर पर अथवा किसी प्रसंग में उसकी अपेक्षा व अवहेलना की जा रही है। बच्चे के माता-पिता सम्मुख न होने पर भी ताऊ-चाचा या ताई-चाची आदि उसका प्रत्येक परिस्थिति में पूरा ध्यान रखते हैं और उसको किसी तरह के अभाव का अनुभव होने का अवसर न आये इसका उपयुक्त प्रयत्न किया जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि माता अपने बच्चे के अधिक निकट होती है, पर परिवार के दूसरे बच्चों के साथ भी उसका व्यवहार समान रहता है और उसी रूप में उनकी देखभाल की जाती है। इस बात का भरसक प्रयास किया जाता है कि परिवार का कोई व्यक्ति अपने ही बच्चे के प्रति अधिक आसक्ति, स्नेह या पक्षपात प्रदर्शित न करे। इस प्रकार परिवार के बच्चों को न कभी कोई अभाव खटकता है और इसीलिए उनमें न कभी भेद-भावना अंकुरित हो पाती है। निस्सन्देह अभिभावकों में अनपेक्षित भावनाओं को दबाने के रूप में एक त्यागवृत्ति बराबर कार्यरत रहती है, जो परिवार को सम्मिलित बनाये रखने का एक कारगर उपाय है।

इसी प्रकार बाह्य-बाधाओं से सुरक्षा की भावना भी सम्मिलित परिवार बनाये रखने का एक कारण रहा है। नगर का निवास सदा से अपेक्षाकृत सुरक्षित रहा है, राज्य-अधिकारियों का छोटा या बड़ा केन्द्र होने से वहाँ सुरक्षा का कुछ-न-कुछ राजकीय प्रबन्ध रहता है, थोड़े या बहुत व्यापार आदि का केन्द्र होने के कारण व्यापारी जनता अपने जान-माल आदि की रक्षा का निजी प्रबन्ध भी कर लिया करती थी, अब भी ऐसा प्रबन्ध बराबर नगरों में देखा जाता है, परन्तु ग्राम व **पल्लियों** में जनसंख्या कम होने और सुरक्षा के लिए नियमित रूप से अनायास सुलभ राजकीय प्रबन्ध भी न होने से चोर-डाकू तथा अन्य द्वेष-मात्सर्यादि-जन्य संघर्षों के भय से अपने-आपको बचाने के लिए यही एक आवश्यक साधन समझा जाता रहा है कि परिवार सम्मिलित-रूप से बना रहे और परिवार की शक्ति को हर तरह से संगठित रख दृढ़ बनाकर रखा जावे। ग्रामों में निवास-स्थानों का निर्माण भी ऐसा होता रहा है, जो ऐसी भयावह स्थितियों में और सदा ही साधारण अवस्था में सुरक्षा के लिए उपयोगी हो। आज ग्राम की बोली में मकानों के ऐसे निर्माण को 'बाखर' या 'बगड़' कहते हैं। इसमें पर्याप्त-स्थान को घेरे हुए चारों ओर मकान रहते हैं, बीच में बहुत काफी खुली जगह रहती है, प्रदेश के अनुसार उसमें कई पेड़ रहते हैं, पानी का प्रबन्ध कुआं आदि बनाकर बहुत पक्का रहता है, बाहर जाने-आने का केवल एक मुख्य द्वार होता है, इसकी दुहरी दीवार रहती हैं, जिनमें दरवाजे आमने-सामने नहीं रहते। यह एक अच्छा बड़ा कमरा रहता है, जो बाहर जाने-आने के अतिरिक्त समस्त परिवार की आवश्यकता के अनुसार बैठक का भी काम देता है।

धन्धा और प्रतिष्ठा- सम्मिलित परिवार के समस्त समर्थ व्यक्तियों का धन्धा कोई एक हो, ऐसा नहीं है। ग्रामों में धन्धा मुख्य रूप से एक ही होता है- कृषि और उसके साथ पशुपालन। परिवार में अधिक व्यक्ति होने पर अन्य कृषकों के खेतों में मजदूरी करते हैं। इन साधनों से जीवन-निर्वाह पर्याप्त न होने पर कुछ साहसी या बाधित व्यक्ति बाहर मेहनत-मजदूरी के लिए चले जाते हैं, योग्यतानुसार धन कमाकर घर आ जाते हैं, उसका उपयोग घर के सभी व्यक्तियों के लिए समान रूप से होता है। ग्रामों के जो परिवार कृषि-साधनों द्वारा कुछ सम्पन्न स्थिति में होते हैं और परिवार के किसी होनहार बालक को शिक्षित कर लेने में सफल हो जाते हैं, ऐसे युवक बाहर सरकारी या गैरसरकारी नौकरियों में चले जाते हैं, उनके द्वारा जो आय

होती है, वह समस्त परिवार की समृद्धि के उपयोग में आती है। इससे परिवार की प्रतिष्ठा बढ़ती है और आगे शिक्षा, चिकित्सा तथा समाज एवं सरकार में ऊँचे पदों पर पहुँचने के लिए परिवार में होनहार युवकों का मार्ग प्रशस्त होता है।

ग्रामीण समाज में इस बात को प्रत्यक्षरूप से देखा जाता है कि जो परिवार सम्मिलित रहते हैं और जनशक्ति से दृढ़ होते हैं, उनके घरेलू धन्धे भी अधिक फलप्रद रहते हैं, अन्य व्यक्तियों द्वारा उन्हें किसी प्रकार की हानि उठाने के भय का भी अवसर नहीं आता तथा उनके दैनिक व आकस्मिक कार्य भी अधिक सुविधा के साथ सम्पन्न हो जाते हैं। जो परिवार बँटकर अलग हो जाते है उनमें इन चीजों का अभाव देखा जाता है। कभी किसी परिवार में कोई उद्दाम साहसी व्यक्ति पैदा हो जाय, तभी कहीं इस स्थिति का अपवाद देखने में आता है, पर ऐसे अवसर कम आते हैं। यह विषमता और हीनभावना का भय ग्रामीण समाज में संघर्ष की स्थिति को सदा बनाये रखता है।

ग्रामीण परिवारों की आय में नौकरी आदि से प्राप्त धन के अतिरिक्त पशुपालन से होने वाली वृद्धि का भी बड़ा महत्त्व है। दूध, घी आदि की बिक्री से तथा अतिरिक्त पशुओं की बिक्री से पर्याप्त आय की संभावना रहती है। ऐसे सम्मिलित परिवारों को जिनके पास कृषि भूमि की कमी नहीं होती-पशुपालन में अधिक सुविधा प्राप्त रहती है। जिन ग्रामों के आस-पास गोचर-भूमि विस्तृत रहती है, वहाँ साधारण कृषि-भूमि रखने वाला किसान भी शक्ति के अनुसार अच्छी मात्रा में पशुपालन कर लेता है, यह उसकी आय का एक ठोस साधन होता है।

ग्राम्य सामाजिक जीवन- सम्मिलित परिवारों की स्थिति में गाँव का सामाजिक जीवन अधिक निष्कण्टक और सुख-सुविधाजनक रहता है। बड़े परिवार आवश्यकता होने पर अन्य परिवारों की आर्थिक सहायता करने का संकोच नहीं करते, अवसर आने पर उनकी सुरक्षा में भी पूरा सहयोग देते हैं। सामूहिक रूप में यह एक ऐसा संघटन होता है, जिसे 'पारिवारिक समाजवाद' की संज्ञा दी जा सकती है। पर गाँवों में भी आज वैसी अवस्था नहीं रही है। शिक्षा के प्रसार और विभिन्न प्रकार के औद्योगिक विकास के कारण ग्राम्य समाज के जीवन में बड़ा परिवर्तन आ गया है, भूमि ही वहाँ का जीवन-निर्वाह के लिए एकमात्र बड़ा साधन है। सम्मिलित परिवार की जनसंख्या अधिक बढ़ने पर परिवार के विभाजन के साथ सीमित कृषि-भूमि भी छोटे-छोटे टुकड़ों में बँट गई। अपनी-अपनी सब को पड़ी, एक-दूसरे का सहयोग समाप्त हो गया, अच्छे शिक्षित नौकरी-पेशा व्यक्ति नगरों में जा बसे, अनेक व्यक्ति सुविधानुसार बाहर जाकर छोटे-बड़े उद्योगों में लग गये वहीं के निवासी बन गये, नगरों की आधुनिक सुविधा सर्वत्र गाँवों में उपलब्ध नहीं अत: सन्तान वहीं के निवास की अभ्यस्त हो गई, गाँव सदा को छूट गया। भूमि के छोटे-छोटे टुकड़ों में बाकी रहे व्यक्तियों का गुजारा भी कठिन हो गया। ऐसी हालत में समर्थ व्यक्ति कारखानों और नगरों की ओर निर्वाह के लिए चल पड़े, सब अलग-अलग हो गए, छोटे-छोटे परिवार निर्बल और साधनहीन हो गए, आर्थिक आय भी न रही, प्रतिष्ठा भी चली गई। इस प्रकार सम्मिलित परिवार विघटित हो गए।

नगर में जाकर लोगों ने दूसरे प्रकार के संघटन बनाये और अपने पैरों पर खड़े हो गए। जिनको ऐसा सुयोग न मिला, वे अपनी शक्ति पर छोटे-मोटे उद्योग अथवा अन्य कार्यों में लग गए। हाबड-तोबड़ बहुत है पर शान्ति और सान्त्वना के चिह्न दिखाई नहीं देते। गाँवों की हालत और बुरी, छोटे संकीर्ण परिवार हीनभावना से दबे हुए, शान्ति और सुरक्षा की समस्या सिर पर, जन-शक्ति की कमी से कृषि में मजदूरों का अभाव। जो परिवार अभी तक किसी-न-किसी रूप में सम्मिलित चले आ रहे हैं, उनकी अवस्था अपेक्षाकृत अच्छी है। ग्रामीण जीवन को सुखमय बनाने के लिए सम्मिलित परिवार की योजना एक अच्छा उपाय है।

उन्नति का कारण सत्योपदेश

जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्यासत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें क्योंकि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है। **(स. प्र. ३)**

'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती का अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' आर्यों का ब्रह्मास्त्र है। ऐसा ब्रह्मास्त्र, जिसने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति 'वैचारिक क्रान्ति' को जन्म दिया। अन्धश्रद्धा, अविवेक और पाखण्ड मानव समाज में सहज ही पनपने वाली समस्या है, इसलिये प्रत्येक काल, प्रत्येक स्थान और प्रत्येक परिस्थिति में इन समस्याओं के उन्मूलन की आवश्यकता है-अत: 'सत्यार्थ प्रकाश' की आवश्यकता भी सदैव ही अनिवार्य रहेगी, परन्तु यह विचार जन-जन तक पहुँचे, तो ही लाभकारी होगा। इसी को ध्यान में रखते हुए परोपकारिणी सभा ने ५ वर्ष पूर्व 'विश्व पुस्तक मेला' दिल्ली में प्रतिवर्ष 'सत्यार्थप्रकाश' के साथ 'महर्षि का जीवन-चरित्र' एवं 'आर्याभिविनय' पुस्तक का नि:शुल्क वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है। इस कार्य के परिणाम भी बहुत सुखद रूप में सामने आये हैं। पुस्तक में कई व्यक्ति आकर कहते हैं कि हमारे पास यह पुस्तक है, हम पिछले वर्ष ले गये थे।

प्रत्येक आर्यमात्र की यह इच्छा होगी कि वह भी इस ग्रन्थ को वितरित कर पुण्य का भागी बने। इसके लिये सभा प्रत्येक आर्य को इस महायज्ञ में सम्मिलित करना चाहती है। प्रत्येक व्यक्ति यज्ञ में अपनी आहुति दे तो यज्ञ और अधिक भव्य एवं विस्तृत हो जाता है।'सत्यार्थप्रकाश' के नि:शुल्क वितरण रूपी यज्ञ में अपनी आहुति देने के लिये आप अपने सामर्थ्यानुसार सहयोग दे सकते हैं। परोपकारिणी सभा की ओर से प्रकाशित सत्यार्थप्रकाश बड़े अक्षरों में, बढ़िया कागज पर, सजिल्द छापी जाती है, जिससे नये व्यक्ति के लिये भी पुस्तक संग्रहणीय बन जाती है। इस पुस्तक की छपाई में एक प्रति का खर्च लगभग १०० रु. आता है। **यदि कोई व्यक्ति अपनी सात्त्विक भावना से केवल २० पुस्तकें (इससे अधिक कितनी भी) ही वितरित करवाना चाहता है, तो सभा उतनी प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित करेगी। इसी प्रकार ३०, ५०, १०० आदि।**

१०० रु. प्रति के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं। आहुतियाँ जितनी अधिक होंगी, यज्ञ का फल भी उतना ही अधिक होगा।

अपने दान के साथ 'सत्यार्थप्रकाश वितरण' अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं। यह यज्ञ आपका है, प्रत्येक आर्य का है। अत: प्रत्येक आर्य इसमें अपनी आहुति अवश्य दे।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	२१००/- रु.
	३० प्रतियाँ	३१००/- रु.
	५० प्रतियाँ	५१००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	११०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी और दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। दान अक्टूबर माह के अन्त तक भिजवा देवें, ताकि प्रतियों की संख्या निर्धारित करके उन पर दानदाताओं का नाम अंकित किया जा सके। धन्यवाद।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या-091104000057530 बैंक का नाम-आई.डी.बी.आई. बैंक, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।
IFSC - IBKL0000091

२. बैंक बचत खाता (Savings) संख्या - 10158172715 बैंक का नाम - भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।
IFSC - SBIN0007959

विज्ञान की ईश्वर सम्बन्धी अवधारणाएँ

रामनिवास 'गुणग्राहक'

पिछले अंक का शेष भाग.....

यह महर्षि कपिल की मान्यता नहीं है, सभी ऋषि-मुनि एक स्वर से जीवन को सत्यशील बनाने की प्रेरणा देते हैं। केनोपनिषद् के ऋषि तो यहाँ तक लिखते हैं कि अगर हमने इसी जन्म में उस परम् सत्य परमात्मा को जान लिया तो हमारा जन्म लेना सफल है और अगर उसे नहीं जान सके तो महाविनाश-अर्थात् हमारा ये नर तन नष्ट होने जैसा है। महर्षि दयानन्द सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में लिखते हैं- **'विद्वान् आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्य-असत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् वे स्वयं अपना हित-अहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्या-अर्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।...सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।''** ऋषियों के ये सत्य के महत्त्व सम्बन्धी उद्धरण हमारे मनोमस्तिष्क में अंकित हो जाएँ तो इससे बड़ा सौभाग्य-सुख कुछ भी नहीं हो सकता। आज हमारी स्थिति यह है कि हमारे पास सांसारिक समृद्धि के नाम पर सब कुछ है, लेकिन हमें कहीं नहीं दिखती तो वह है मानव की सत्यशीलता और सत्य-निष्ठा। हमारे जीवन में सच न होने के कारण ये सांसारिक समृद्धि हमें विलासिता की सुविधाएँ तो दे सकती है और दे रही हैं, मगर जो सुख और सन्तुष्टि हम चाहते हैं, वह इसके पास नहीं है। सुख सत्य में है, समृद्धि में नहीं।

आप अपने चारों ओर दृष्टि दौड़ाइये और देखिए कि आपके भरे-पूरे समाज में कहीं सत्य को कहने और सुनने के लिए कोई उपयुक्त स्थान है? हमारा घर तो अपना ही होता है, क्या घर में परिवार के साथ बैठकर सत्य का आदान-प्रदान कर सकते हो? दुकानों या दफ्तरों, कार्यालयों-कारखानों में, सड़कों-चौराहों पर, सामान्य सी सभा-संस्था से लेकर संसद तक में देख लो सर्वत्र सत्य का गला पूरी निष्ठुरता से घोंटा जा रहा है। इतना ही नहीं सत्य, न्याय और धर्म की स्थापना के लिए स्थापित विद्यालय, न्यायालय और मठ-मन्दिर या तीर्थस्थान कहे जाने वाले धर्मस्थलों तक में आपके कान व जबान सत्य सुनने व कहने के लिए तरस जाएँगे। यही क्यों- **अगर हम अपनी मन:स्थिति की अन्तर्यात्रा करें तो कितने महानुभाव ऐसे होंगे जो अपने हृदय में उठने वाले सद्भावों का सम्मान, सद्विचारों का क्रियान्वयन और सद्गुणों का पल्लवन कर पाते हों**? मनुष्य के इस सार्वत्रिक अध:पतन की अवस्था में कौन यह विश्वास करेगा कि हमारे वेद-शास्त्र आधुनिक विज्ञान से कहीं अधिक तर्कपूर्ण, सत्य तक गहरी पहुँच रखने वाले एवं सत्य को सम्पूर्णता से प्रमाणित करने में सक्षम हैं।

यह हमारा आलस्य-प्रमाद और अविवेक ही है, जिसके चलते हम अपने मूल धर्मग्रन्थ वेद को पढ़ना-पढ़ाना, सुनना-सुनाना तो दूर देखते-दिखाते तक नहीं हैं। यही कारण है कि हमारी अपेक्षा पाश्चात्य विद्वान् वेद को अधिक गहराई से जानते-समझते हैं। श्री W.D. ब्राउन-'सुपीरिऑर्टी ऑफ वैदिक रिलीजन' (वैदिक धर्म की श्रेष्ठता) नामक ग्रन्थ में लिखते हैं- **'वैदिक धर्म केवल एक ईश्वर को स्वीकार करता है। यह एक सम्पूर्णतया वैज्ञानिक धर्म है, जहाँ धर्म और विज्ञान हाथ में हाथ मिलाकर चलते हैं। इसके सिद्धान्त विज्ञान और तत्त्व ज्ञान पर आश्रित हैं''। जैकोलियट नामक फ्रान्सिसी विद्वान् 'बाइबिल इन इण्डिया' नामक ग्रन्थ में लिखता है- ''बड़े आश्चर्य की बात है कि ईश्वरीय ज्ञान माने जाने वाले ग्रन्थों में से केवल हिन्दुओं का धर्मग्रन्थ (वेद) है, जिसके विचार वर्तमान विज्ञान के साथ पूर्णतया संगत होते हैं, क्योंकि यह सृष्टि की उत्पत्ति को शनै: शनै: (धीरे-धीरे) मानता है''।**

अमेरिकन महिला मिसेज़ ह्वीलर विल्लौक्स ने लिखा है- **'हमने भारत के प्राचीन धर्म के विषय में सुना व पढ़ा है। यह उन महान् वेदों की भूमि है, जो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ हैं, जिनमें न केवल पूर्ण जीवन के लिए उपयोगी धार्मिक तत्त्व बताए गए हैं, बल्कि उन**

तथ्यों का भी प्रतिपादन है, जिन्हें विज्ञान ने सत्य प्रमाणित किया है। बिजली, रेडियम, इलैक्ट्रॉन्स, हवाई जहाज आदि सब चीजें वेदों के दृष्टा ऋषियों को ज्ञात प्रतीत होती हैं''! विदेशी विद्वानों के इन विचारों से यह सुस्पष्ट हो जाता है कि विज्ञान ईश्वर सम्बन्धी जिन तथ्यों का उद्घाटन कर रहा है, वे वेद-विद्या से अनभिज्ञ लोगों के लिए नए हो सकते हैं, जो वेद पढ़ते-पढ़ाते, सुनते-सुनाते रहते हैं, वे जानते हैं कि मनुष्य के लिए जो ज्ञान परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में वेदों के माध्यम से दे दिया था, मनुष्य उससे बढ़कर कुछ भी नहीं पा सकता। यहाँ एक तथ्य और खोलना आवश्यक है और वह है वेदों का सच्चा स्वरूप, क्योंकि धर्म के नाम पर जो मत सम्प्रदायों का पाखण्डवाद संसार में फैला, जब ये वेद-विद्या कहाँ थी? उसके होते हुए ये धार्मिक अन्ध विश्वास क्यों तो उत्पन्न हुए और कैसे बढ़ते चले गए?

इन प्रश्नों के उत्तर में ऐतिहासिक सच यह है कि लगभग ५००० वर्ष पूर्व होने वाले महाभारत के महायुद्ध में असंख्य योद्धाओं और विद्वानों के समाप्त हो जाने से संसार में सर्वत्र एक अव्यवस्था या अराजकता जैसी स्थिति बन गई। इसका परिणाम यह हुआ कि सशक्त शासन वा दूरदृष्टा विद्वानों के मार्गदर्शन के अभाव में अपनी ढपली-अपना राग की कहावत साकार होने लगी, वेद विद्या का लोप हो गया। वेदों के स्थान पर पुराणों जैसे जालग्रन्थ हमारे धर्मग्रन्थ बनकर रह गए। जिन स्वार्थी, विद्या के शत्रु लोगों ने पुराणों का पाखण्डवाद चलाया वे ईश्वर की दी हुई वेद विद्या का घोर अनादर करते हुए कहने लगे कि पुराण नहीं पढ़े तो वेदों का पढ़ना व्यर्थ है और यदि पुराण पढ़ लिया तो फिर वेदों के पढ़ने का क्या लाभ! इनके अनुसार वेदों का पढ़ना तो हर दृष्टि से व्यर्थ ही है। ऐसा पाखण्ड प्रवाद शताब्दियों नहीं सहस्राब्दियों (हजारों वर्ष) तक इस भारत भूमि पर चलता रहा। इस कालखण्ड में सायण व महीधर आदि कई विद्वानों ने वेदों के भाष्य भी किये, मगर वे पुराणों द्वारा फैलाये गये प्रदूषण से मुक्त सच्चे स्वरूप में नहीं आ सके। प्रभु कृपा से घोर अविद्याऽन्धकार की बेला में इस भारत भूमि पर सन् १८२५ में एक दिव्य आत्मा का जन्म हुआ, जो आगे चलकर महर्षि दयानन्द सरस्वती के रूप में प्रसिद्ध हुए! इन्हीं महापुरुष की तपः साधना जन्य ऋतम्भरा बुद्धि का चमत्कार है कि मानव जाति को ईश्वर प्रदत्त वेद ज्ञान अपने सच्चे स्वरूप में प्राप्त हुआ। सायण और महीधर के वेद भाष्यों को पढ़कर जो योरोपीय विद्वान् वेदों को 'गड़रियों के गीत' कहा करते थे, वे ही योरोपीय विद्वान् महर्षि के वेदभाष्य को देखकर वेद को ज्ञान-विज्ञान का मूल स्रोत मानने लगे हैं। स्वामी विवेकानन्द तक से प्रशंसा-प्राप्त भारतीय-विद्याओं के गहन अध्येता प्रो. मैक्समूलर महर्षि दयानन्द के वेद-भाष्य के सम्बन्ध में लिखते हैं-**'स्वामी दयानन्द जी की दृष्टि में वेदों में प्रतिपादित प्रत्येक वस्तु न केवल पूर्ण सत्य थी, बल्कि वे एक कदम और आगे गए और अपनी व्याख्या से वे औरों को भी यह विश्वास दिलाने में सफल हुए कि प्रत्येक जानने योग्य वस्तु, यहाँ तक कि आधुनिक विज्ञान के नवीनतम् अविष्कारों का भी वेदों में निर्देश है! रेल, बिजली, तार, बेतार की तार इत्यादि सब कम से कम बीज रूप में वैदिक ऋषियों को ज्ञात थी''**।*

इन उद्धरणों से ये सिद्ध हो रहा है कि धर्म और ईश्वर के बारे में विज्ञान जो आज कह रहा है, ईश्वर को जिस तर्क सिद्ध रूप में स्वीकार कर रहा है, यह सब कुछ हमारे वैदिक ऋषियों ने लाखों वर्ष पहले जान व देख लिया था। इससे एक बात यह भी समझ में आ जाती है कि नास्तिकता न तो बहुत पुरानी है और न ज्यादा टिकने वाली, जन सामान्य के शिक्षित होते ही नास्तिकता को मिट जाना पड़ेगा। समझ के अभाव में लोग यह नहीं देख पाते कि संसार में रहकर संसार के स्वामी व संचालक को ही न मानना कितना अनर्थकारी है। आज संसार के लोग सृष्टि का अधिकतम व गहनतम ज्ञान पाने के लिये पागल हुए फिरते हैं, किसी के प्रति अनभिज्ञ नहीं रहना चाहते, कि पता नहीं प्रकृति का कौन सा पदार्थ किस विधि से हमारे किस काम आ जाए। ऐसे में ये कम्युनिष्ट लोग परमात्मा जैसे परम् तत्त्व के बारे में विचारना व बोलना भी घृणित अपराध कहें तो इन्हें बुद्धि-शत्रु कहना ही अधिक सार्थक होगा।

नास्तिकता का अभियान चलाने वाले वैज्ञानिक तथ्यों के नाम पर विकासवादियों के तर्कों का सहारा लेते

हैं! विकासवाद के जनक चार्ल्स डार्विन का मानना था कि संसार में पहले एक कोशिकीय जीव पैदा हुआ, फिर बहुकोशिकीय जीव बने और लाखों वर्षों तक उनका धीरे-धीरे शारीरिक विकास होता रहा, यही विकास बन्दरों तक पहुँचकर अन्तिम रूप में मनुष्य पर आकर ठहर गया- अर्थात् मनुष्य इस विकास यात्रा का अन्तिम व पूर्ण विकसित जीव है, जिसे विकासवादी सर्वोत्कृष्ट प्राणी कहते हैं! विकासवादी मानते हैं कि यह विकास जीवों की आवश्यकता के अनुसार हुआ। जब कभी अपनी शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए जीवों ने जो-जो प्रयास किये कालान्तर में उनके शरीरों में उस-उस क्षमता का विकास होता गया। इसका आरम्भ यह हुआ कि विकासवादियों के अनुसार मनुष्य एक ऐसा सर्वगुणसम्पन्न प्राणी है, जिसमें छोड़ी गई सभी योनियों के उत्कृष्ट और उपयोगी गुण मौजूद हैं, क्योंकि उनको तो उसने कभी छोड़ना ही नहीं चाहा होगा, उनसे तो उसे समय-समय पर काम पड़ा ही होगा-तो ऐसे गुणों का अभाव तो नहीं होना चाहिए। आज इस दृष्टि से विचार करें तो विकासवाद का किला ढह जाता है! ऐसे बहुत से उत्तमोत्तम गुण हैं, जिनकी मनुष्य को आज भी बहुत आवश्यकता है, जिनके अभाव में मनुष्य को बहुत बड़ी-बड़ी हानियाँ उठानी पड़ती है। कई पशु-पक्षियों को भूकम्प जैसी त्रासदी का पूर्वाभास हो जाता है, अगर यह उपयोगी गुण मानव में भी होता तो अपार जन-धन की हानि से बचा जा सकता था। कुत्ते की सूँघने की शक्ति की मनुष्य को आज भी बहुत आवश्यकता है, इसके लिए कुत्तों पर लाखों-करोड़ों का व्यय करना पड़ता है, यदि हर मनुष्य में यह सद्गुण होता, जिसकी कि सतत् आवश्यकता पड़ती रहती है तो स्थिति आज बहुत रोचक होती!

विकासवादियों के पास इस प्रश्न का भी कोई उत्तर नहीं है कि संसार में जीव का प्रादुर्भाव हुआ कैसे? एक कोशिकीय जीव की उत्पत्ति कैसे हुई? विज्ञान का सिद्धान्त है कि किसी तथ्य से सम्बन्धित कोई प्रश्न अधूरा रह जाता है, तो वह तथ्य विज्ञान के क्षेत्र में प्रामाणिक या मान्यता प्राप्त नहीं होता। जीव की उत्पत्ति और प्राणियों के विकास से सम्बन्धित कई प्रश्न ऐसे हैं, जिनका उत्तर आज भी नहीं दिया जा सकता। प्रथम तो जीव उत्पत्ति का ही प्रश्न है। सर्वप्रथम तो डार्विन के सहयोगी डॉ. रसेल वालेस ही डार्विन के विकासवाद से सहमत नहीं हो सके थे। दूसरी बात चार्ल्स डार्विन के पुत्र जार्ज डार्विन ने भी इस विकासवाद का खण्डन करते हुए कहा था कि जीवों की उत्पत्ति का प्रश्न आज भी उतना ही अनसुलझा है जितना वर्षों पहले था। भारत के विश्वविख्यात वनस्पतिशास्त्र विशेषज्ञ बीरबल साहनी से किसी ने प्रश्न किया कि प्रारम्भ में जीवन कहाँ से आया और प्रारम्भ में ज्ञान कहाँ से आया? तो उन्होंने उत्तर दिया- '**इसके साथ हमारा कोई सम्बन्ध नहीं कि आरम्भ में जीवन या ज्ञान कहाँ से आया। हम यह मानकर चलते हैं कि आरम्भ में कुछ जीवन भी था और कुछ ज्ञान भी था।**'' नोबल पुरस्कार विजेता जोसेफसन कहते हैं कि कई समस्याओं के समाधान नहीं मिलने पर यह मान लिया जाता है कि भविष्य में इन समस्याओं को सुलझा लिया जाएगा। सृष्टि के सृजन और संचालन के कई प्रश्न ऐसे हैं, जिनका जवाब विज्ञान के ज्ञात नियमों के आधार पर नहीं दिया जा सकता। उदाहरण के लिए मनुष्य जैसे बुद्धिमान जीव की उत्पत्ति को ठीक तरह से नहीं समझाया जा सकता है।

कहाँ गया विकासवाद? डार्विन के साथ विकासवाद पर काम करनेवाले डॉ. रसेल इसे अमान्य करते हैं, उनके पुत्र जार्ज डार्विन जीवन के प्रश्न को अनसुलझा मान रहे हैं, बीरबल साहनी इस पर बोलने में असमर्थ हैं, जोसेफसन मनुष्य की उत्पत्ति को समझने में विज्ञान को असमर्थ बता रहे हैं। इन सबके होते विकासवाद की उपयोगिता व लाभ ही सन्देहास्पद हो जाते हैं। सच यह है कि जैसे मानव का ज्ञान-विज्ञान घटता-बढ़ता रहता है, उसके बनाए यन्त्रों में संशोधन और सुधार होते रहते हैं, तो इसी आधार पर अनुमान खड़ा किया कि जीवों के शरीर भी आवश्यकता के अनुसार संशोधित होते रहे होंगे और यह मनुष्य उन संशोधनों की अन्तिम कड़ी है। आज विज्ञान ईश्वर की आवश्यकता अनुभव करते हुए उसकी सिद्धि के लिए प्रयासरत है। भौतिक शास्त्री स्टेफिन अनविन अपने कठिन परिश्रम के बाद ईश्वर की प्रायिकता ६७ प्रतिशत बताते हैं। स्टेफिन अनविन ने अपनी पुस्तक- 'द

प्राबेबिलटी ऑफ गॉड : सिम्पल कैलकुलेशन दैट प्रूव्स द अल्टीमेट ट्रुथ' में ईश्वर के अस्तित्त्व के पक्ष व विपक्ष में विज्ञान के आंकड़े जुटाकर ईश्वर के होने की प्रायिकता की गणना की है। प्रायिकता का सामान्य अर्थ सम्भावना होता है- अर्थात् विज्ञान की दृष्टि से ईश्वर का होना ६७% सत्य है।

विज्ञान कैसे ईश्वर को मानता है, इसका वर्णन किया जा चुका है। विज्ञान वेद को भी मान्यता देता है। यजुर्वेद में आता है- 'य ईशे अस्य द्विपदे चतुष्पद:' (२३.३) अर्थात् उस परमात्मा ने दोपाए मनुष्य और चौपाए पशु आदि के शरीरों की रचना की है। विज्ञान मानता है कि ईश्वर का ज्ञान पूर्ण है, वह सर्वज्ञ है, उसकी हर रचना पूर्ण है- अपरिवर्तनीय है। ऐसे में प्राणियों के विकास की बात किसको स्वीकार्य होगी? कुल मिलाकर विज्ञान के नाम पर खड़े किये गये विकासवाद के सिद्धान्त को विज्ञानवादियों ने भी कभी पूरे मन से स्वीकार ही नहीं किया और आज की नई खोजें तो यही कह रही कि विकासवाद भी अब पुराना पड़ने लगा है, जैसे विकासवाद आवश्यकता के अनुसार जीवों के शरीर में परिवर्तन और परिवर्धन की वकालत करता है, वैसे ही स्वयं उसे आज के नए परिवेश में जीवित रहने के लिए नया कलेवर (शरीर, आकार) धारण कर लेना चाहिए, अन्यथा वह भी किसी लुप्त प्रजाति की तरह इतिहास की वस्तु बनकर रह जाएगा।

विज्ञान सम्भावनाओं के धरातल को आशंकाओं की आँच पर तपाकर, तर्क और प्रमाणों से ठोक-ठोक कर, एक ऐसा ठोस और व्यवहार-परक आकार देता है, जिसे हर बुद्धि जीवी अपने जीवन में स्वीकार करके सम्यक् लाभ ले सके। सम्भावनाओं को सत्य सिद्ध करना विज्ञान का मूल-उद्देश्य है, लेकिन इसी के साथ विज्ञान के क्षेत्र में काम करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को एक बात और सोच लेनी चाहिए कि सत्य कभी मानव या प्राणी जगत् के लिए दु:खद या हानिप्रद नहीं रहता फिर क्या कारण है कि विज्ञान की उपलब्धियों का एक बड़ा भाग ऐसा है जिसने मानवता को आतंकित कर रखा है। नए-नए हथियार, अनेक प्रकार के विष, महाविनाशक बमों की श्रृंखला, रासायनिक और जैविक मानवताघाती सामग्री-किसकी उपज हैं ये सब? वास्तविकता के युग में विज्ञान के कदम क्या भटके सम्पूर्ण पृथ्वी को आग के शोलों से झुलसाकर रख दिया! जो विज्ञान एक वरदान की तरह था वह अभिशाप क्यों बन गया? तारक से मारक की भूमिका में आकर विज्ञान आत्महत्या करने के बहुत निकट आ चुका है। विज्ञान को जीवित रहना है तो उसे विनाश-पथ छोड़कर विकास के पथ पर चलना होगा। आज आवश्यकता इस बात की है कि विज्ञान ने जो भयानक विध्वंस लीला रची है, उसकी क्षमता को समाप्त या कम करने की दिशा में त्वरित व व्यापक अभियान छेड़े। पूर्वकाल (महाभारत-काल) में भी बड़े भयानक अस्त्र थे, जिन्हें आग्नेयास्त्र, ब्रह्मास्त्र आदि कहा जाता था, लेकिन वह युग और था - तब के विज्ञानवादी अटल ईश्वर विश्वासी थे, उनकी चिन्तनशीलता बहुमुखी या सर्वतोमुखी थी। उन्होंने जहाँ आग्नेयास्त्र (आज की भाषा में कहें तो परमाणु बम) तैयार किये वहीं वरुणास्त्र नाम से ऐसे अस्त्र भी बनाए जो त्वरित गति से वर्षाकराकर उनका प्रभाव समाप्त कर देते थे! माना आग्नेयास्त्र किसी दुष्ट व्यक्ति के हाथों में पड़ भी जाए और वह मानवता के विरुद्ध उसका दुरुपयोग करने लगे तो वरुणास्त्र से उसका प्रभाव पूर्णत: नष्ट या अत्यन्त न्यूनतम किया जा सके। आज हमारे विज्ञान के पास ऐसा कुछ भी नहीं है, लगता है किसी ने इस दिशा में सोचा ही नहीं।

आज विज्ञान एक नए युग में प्रवेश कर रहा है, विशालता की बात करें तो वह लाखों-करोड़ों प्रकाशवर्ष दूर अन्तरिक्ष में झाँकने में सक्षम हो गया है तो दूसरी ओर सूक्ष्म जगत् में उसके अनुभव कहते हैं कि परमाणु भी एक लघु सौरमण्डल की तरह है। परमाणु का कुरेदकर देखने और ब्रह्माण्ड के आर-पार दृष्टि दौड़ाने को आतुर विज्ञान इन सबमें उस परम् पिता परमेश्वर का रचना कौशल मानता है। विज्ञान जब इस रचना के अधिक गहरे ज्ञान में रचयिता की छवि निहारने लगा है, वह मानता है कि यह सृष्टि परमात्मा ने हम मनुष्य आदि प्राणियों के सुख के लिये बनाई है, तो विज्ञान को थोड़ी समझदारी और दिखानी चाहिए। विज्ञान के लिए यह अत्यन्त उचित होगा

कि वह तय करे कि इस सृष्टि की सुव्यवस्था और सुरक्षा के लिए उसे भविष्य में क्या करना चाहिये? अब तक विज्ञान के केन्द्र में मानव-हित रहा है - वह भी आधा-अधूरा। इतिहास साक्षी है कि कभी क्रूर तानाशाहों के भय से या कभी विज्ञानवेत्ताओं के लालच में पड़कर विज्ञान ने मानव-हित के विरुद्ध जाकर कई अनर्थकारी कार्य भी किये हैं। आज विज्ञान का ही प्रभाव है कि कई राष्ट्र अपनी घातक उपलब्धियों का भय दिखाकर मानवता का क्रूर शोषण करते नजर आते हैं। यदि वे सारी मानवता को आतंकित करते हैं तो केवल अपनी वैज्ञानिक उपलब्धियों के बल पर - ऐसी स्थिति में विज्ञान संहारक रूप धारण करके दुष्ट प्रवृत्तियों का ऐसा हथियार बन गया है, जिससे मानव ही नहीं प्राणीमात्र का जीवन संकट में पड़ गया। विज्ञान की कई उपलब्धियाँ जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं - यथा जल और वायु के जीवन तत्त्वों को निरन्तर नष्ट कर रही है। विज्ञानोन्मत्त राष्ट्र यदि घातक अस्त्रों का प्रयोग न भी करें तो भी उनकी वैज्ञानिक उन्नति के विभिन्न आयाम पर्यावरण को विषैला बनाकर भूमण्डल के चहचहाते जीवन को धीमा जहर देकर नष्ट करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार घोषित करते हैं। इन सबके चलते यदि विज्ञान ने मानव-हित के लिये कुछ किया भी है तो वह भी मानव-हित में सर्वथा असमर्थ सिद्ध होता है। चन्द पीढ़ियों को सुविधा देकर मानव अस्तित्त्व को खतरे में डालना विज्ञान की उपलब्धि मानी जाए या अभिशाप?

अब विज्ञान को अपनी दिशा बदलनी होगी, उसे ध्वंस से विमुख होकर सृजन-उन्मुख होना पड़ेगा। सृजन कभी छोटी सोच लेकर नहीं किया जाता, सृजन कोई सामाजिक प्रक्रिया नहीं- यह एक ऐसी क्रिया है जो जीवन के अस्तित्त्व के साथ जुड़ी हुई है। सृजन है तो जीवन है, जीवन है ही तब तक, जब तक कि सृजन है। सृजनहीन जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती- कल्पना करने के लिए भी जीवन चाहिए। जीवन को मिटाकर विज्ञान स्वयं भी मिट जाएगा। क्या यह एक बहुत बड़ा आश्चर्य नहीं कि अपनी वैज्ञानिक उपलब्धियों के बल पर आकाश की गहराइयों और परमाणु की सूक्ष्मता में ताक-झाँक करने वाला मानव अपने अस्तित्त्व पर मँडराने वाले इस भयावह संकट को नहीं देख पा रहा? अणु-परमाणुओं की रहस्यमयी परतों को खोलने में व्यस्त मनुष्य जल और वायु जैसे जीवनदायक तत्त्वों की नष्ट कर दी गई जीवनी शक्ति को पुन: प्राप्त करने का जीवन-रक्षक अभियान कब चलाएगा? कहीं ऐसा न हो प्रकृति हमें प्रायश्चित्त का अवसर दिये बिना अपने ढंग से दण्ड देने का मन बना ले? यदि ऐसा हो गया तो युगों के बाद कभी किसी अन्य ग्रह का प्राणी समुदाय पृथ्वी पर जीवन के चिन्ह ऐसे ही खोजेंगे जैसे पृथ्वीवासी चन्द्रमा या मंगल ग्रह पर खोज रहे हैं।

जीवन से चहचहाती हुई, वृक्ष वनस्पतियों, नदी-नालों, कूप-तडागों और लता-निकुञ्जों से दुल्हन की तरह सजी हुई यह पृथ्वी- हमारी इस वैज्ञानिक तरक्की के चलते एक दिन विधवा की सूनी माँग जैसी सूनसान, निर्जन, जीवन तत्त्वों से सर्वथा विहीन होकर एक प्राकृतिक पिण्ड के रूप में इस अनन्त ब्रह्माण्ड का एक नगण्य सा अंग बनकर रह जाएगी। ईश्वर-विश्वास से हीन इस क्रूर हो चुके मानव के हाथों में पड़कर आज का विज्ञान इस पृथ्वी का भयावह विनाश करने की दिशा में बहुत आगे निकल चुका है। अब विज्ञान नास्तिक मनुष्य के हाथ का खिलौना बनकर विनाश की बिसात नहीं बिछाएगा- अब उसे मनुष्य को परम आस्तिक बनाना होगा। मनुष्य की अन्त:वृत्तियों का प्रवाह दया, कृपा, कोमलता, दान, सहानुभूति व करुणा जैसे मानवीय गुणों की ओर मोड़ कर उसे प्राणियों के प्रति संवेदनशील बनाना होगा। विज्ञान को अब धर्म का सहारा लेकर मार्गदर्शन करना होगा। वह मार्गदर्शन कुछ इस ढंग का होना चाहिए- ऐ मानव! कभी तृप्त न होनेवाली तृष्णा के वशीभूत होकर तूने इस पृथ्वी के जीवन रस में प्राणघातक विष घोल दिया है। इस रत्नगर्भा, अन्नपूर्णा वसुन्धरा से युगों तक जीवन रस का पान करनेवाले मानव! तू कितना निष्ठुर, कितना कृतघ्न और कितना निर्दयी हो गया है। करोड़ों वर्षों से तेरी स्वाभाविक भूख व शारीरिक आवश्यताओं को तृप्त करती चली आ रही इस धरती माता का सारा जीवन रस तूने नष्ट कर दिया। तूने इस ममतामयी माँ को इस योग्य भी नहीं छोड़ा कि यह तेरी आने वाली सन्तति को अपनी गोद में लेकर मोद मनाती हुई उसे अपने विशाल वक्षस्थल से

लगाकर जीवन रस की दो बूँद पिला सके। तूने अपनी भूख को इतना बढ़ा लिया कि अपनी भावी सन्तति के हिस्से का जीवन तत्त्व भी डकार गया। नहीं सोचा कि तेरे फैलाये हुए प्रदूषण रूपी मृत्युपाश में छटपटाती हुई तेरी सन्तान अपनी साँसों के साथ संघर्ष में हारती हुई इस धरती माता से अपने हिस्से का जीवन माँग रही होगी, और तेरे क्रूर शोषण, हिंसक दोहन से रिक्त हो चुके हृदय को दिखाकर यह वात्सल्यमयी माँ तिक्त भाषा में तेरी क्रूरता के किस्से कहेगी। सुनाएगी उन्हें - मेरे प्यारे पुत्र-पुत्रियों! मेरा सारा जीवन रस तुम्हारे ही पूर्वजों की भेड़िये जैसी हवस की भेंट चढ़ गया। मुझे खोखला कर दिया उन दरिन्दों ने, यह जो विषैलापन आप भोग रहे हो ये उन्हीं का प्रसाद है। मेरे पास तुम्हें देने के लिये तो क्या कुछ कहने के लिए सांत्वना के दो शब्द भी नहीं है। तुम्हारी यह दुर्दशा तुम्हारे पूर्वजों की ही देन है जीवन की पुकार लेकर तुम उन्हीं के पास जाओ।

ऐ सुविधा भोगी, स्वार्थ के पुतले, छोटी समझ बड़ी भूख वाले मानव! आँखों में आँसू भर कर तेरे द्वारा दिनरात विसर्जित विष से रोगी हुए शरीर को लेकर अपाहिज और असहाय तेरी भावी सन्तति जब इस प्रश्न को लेकर तेरे सामने गिड़गिड़ाएगी तो तुझे कैसा लगेगा? अपनी मूर्खता के चलते अपने ही हाथों अपनी सन्तति का जीवन-अधिकार चुरा लेने का अपराधबोध क्या तुझे सहानुभूति प्रकट करने की अनुमति देगा? तब क्या स्थिति होगी तेरी? स्वार्थ में अन्धे होने से पहले ऐ मनुष्य! इस महाविनाश के आगमन से पहले अपनी आँखें खोल ले। अपने आत्मजों की दुरवस्था की कल्पना शायद तेरे अन्दर सोयी पड़ी मानवता को झकझोर कर जगा दे- तेरी संवेदनशीलता मरने से पहले सजीव हो उठे। सम्भव है अपनी भयंकर भूल को सुधारने और प्रायश्चित्त करने का सुअवसर तुझे मिल जाए। ध्यान रख मानव! प्रकृति का यह क्रूर शोषण, वायुमण्डल में फैलता हुआ यह प्रदूषण एक ऐसा महा अनर्थ है जो तुझे ही भोगना पड़ेगा। मरकर, जन्मान्तर धारण करता हुआ जब तू जीवन यात्रा के इस पड़ाव से गुजर रहा होगा तो तेरे द्वारा आज उत्पन्न किया गया यह विष तुझसे भी हिसाब माँगेगा। तेरे पास मुँह छिपाने के लिए कोई स्थान इस विष से मुक्त नही होगा। भू-खनिजों का दोहन, वन-सम्पदा का विनाशन, वायु और जल जैसे जीवन तत्त्वों का रासायनिक खाद व कीटनाशक कैमिकल्स के प्रयोग से अन्न-फल व सब्जियों तक का विषैलापन मानव के अस्तित्त्व पर बहुत जल्दी ही प्रलय बन कर टूट पड़ने को आतुर है।

ईश्वर के अस्तित्त्व की स्वीकृति के साथ ही विज्ञान की प्रवृत्तियों में क्रान्तिकारी परिवर्तन आना चाहिए। यदि ऐसा नहीं हो सका, विज्ञान ईश्वर की सृष्टि के प्रति ईश्वरीय दृष्टि अपनाकर सृजन के पथ पर नहीं चल पाया तो विज्ञान द्वारा ईश्वर की स्वीकारोक्ति का कोई अर्थ नहीं निकलता। ईश्वर-विश्वासी विज्ञान बीते युग के नास्तिक विज्ञान के पदचिन्हों पर ही चलता रहा तो यह विज्ञान की कार्यविधि के लिये ही सबसे बड़ा प्रश्न चिन्ह होगा। विज्ञान की कार्य प्रणाली ही यह है कि जब उसे कोई नया तत्त्व या नया सिद्धान्त हस्तगत हो जाता है तो भूतकाल की तत्सम्बन्धी परिकल्पनाओं व खोजों के साथ उसकी संगति बिठाकर सभी भूलों व भ्रान्तियों का परिष्कार कर लेते हैं तथा भविष्य की सभी अनुसन्धान वृत्तियों में उसका पूरा लाभ उठाते हैं। विज्ञान को ईश्वर की अनुभूति का भी भविष्य में ऐसा ही लाभ उठाना चाहिए तथा भूतकाल की भूलों का भी संशोधन कर लेना चाहिए। जैसा कि हम पहले बता चुके हैं कि प्राचीन काल में जब विज्ञान धर्म से प्राण लेकर चलता था, तब विज्ञान ने कई प्रकार के भयानक अस्त्र बनाए, लेकिन साथ ही इनके प्रभाव को नष्ट या न्यून करने वाले शस्त्रास्त्र भी तैयार किये। माना ये घातक शस्त्रास्त्र किसी अयोग्य या दुष्ट व्यक्ति के हाथ लग जाते हैं तो उसके व्यापक विनाश से बचा जा सकता था। आज तो विज्ञान का विकास ही धर्महीन, नास्तिक लोगों के हाथों में हुआ है। ऐसे हृदयहीन लोगों के मनो-मस्तिष्क में कभी भी, कोई भी कीड़ा कुलबुला सकता है। इसलिए विज्ञान को चाहिए कि वह इस विनाश लीला से मानवता को बचाने का उपाय अविलम्ब करे। ईश्वर की सृष्टि के विनाश को रोकना अब विज्ञान की प्राथमिकता होनी चाहिए।

रामनिवास 'गुणग्राहक' आर्य समाज,
श्रीगंगानगर (राजस्थान)

वैदिक पुस्तकालय अजमेर
द्वारा प्रकाशित नये संस्करण

ईश्वर (वैज्ञानिकों की दृष्टि में), प्रस्तुतकर्ता एवं अनुवादक - पं. क्षितीश कुमार वेदालङ्कार

मूल्य -१५० रु., **पृष्ठ** - २६४

दुनिया में दो तरह के मनुष्य पाये जाते हैं, एक वो जो भगवान् को अर्थात् उसके अस्तित्व को स्वीकार करते हैं और दूसरे वे जो भगवान् जैसी किसी सत्ता पर भरोसा नहीं करते। पहले को आस्तिक और दूसरे को नास्तिक कहा जाता है। नास्तिकों के अपने तर्क हैं और इन तर्कों में वे प्राय: वैज्ञानिक प्रयोगों, आविष्कारों, विज्ञान की प्रगति की दलीलों का ही हवाला देते हैं। विज्ञान है तो बहुत अच्छी चीज़, पर अगर कहीं किसी वैज्ञानिक की चूक से कुछ गलत निष्कर्ष आ जाये तो उसे आंखें बन्द करके मान लिया जाता है। आखिर वैज्ञानिक भी तो मनुष्य ही है, गलती तो वह भी करता ही है। इस तरह एक नये प्रकार का अन्धविश्वास 'वैज्ञानिक अन्धविश्वास' जन्म लेता है और दो अन्धविश्वास आपस में टकरा जाते हैं। जो भगवान् को नहीं मानता, वह भी सोचना नहीं चाहता, केवल दूसरों के भरोसे चलता है और जो मानता है, उसने भी अपना दिमाग बाबाओं के पल्ले बाँध रखा है। इन दोनों से अलग कुछ ऐसे भी होते हैं जो अपने मस्तिष्क को थोड़ा मेहनत करने देते हैं और सत्य तक पहुँचने का प्रयास करते हैं। ऐसे ही कुछ वैज्ञानिकों के विचारों को इस पुस्तक में संकलित किया गया है। जरूरी नहीं कि ये सभी वैज्ञानिक भगवान् को स्वीकार करते ही हों, पर वह इतना तो स्वीकार करते ही हैं कि कुछ तो है जो विज्ञान की पकड़ से बाहर है। उनकी इसी 'ना' में शायद 'हाँ' छिपी है, बस अन्तर इतना ही है कि उनकी वह खोज बिना नाम वाली है और वेद ने उसको नाम दे दिया है- 'ईश्वर'।

त्रैतवाद- लेखक-विद्यामार्तण्ड पंडित बुद्धदेव विद्यालङ्कार

मूल्य-२० रु., **पृष्ठ** -४०

परिचय- पं. बुद्धदेव जी एक बार अपने आर्य मित्र के पास मिलने गये। उन्होंने देखा कि मित्र का बड़ा बेटा कम्युनिस्ट विचारधारा से बहुत अधिक प्रभावित है। कारण यह कि वह देश-विदेश में घूमकर आया है और किताबें भी कम्युनिज़्म की ही पढ़ता है। पंडित जी ने वह पुस्तक मांगी, जिससे कम्युनिज़्म का सबसे अधिक प्रभाव पड़ा था। उस पुस्तक का नाम था The Origin of life on the Earth, जिसका विषय था, 'पृथ्वी पर पहली बार जीवन कैसे आया?' बुद्धदेव जी ने इस पुस्तक को आद्योपान्त पढ़कर इसकी समीक्षा की और उस समीक्षा की एक पुस्तक बन गई- त्रैतवाद।

आख्यातिक- लेखक- महर्षि दयानन्द सरस्वती

मूल्य- २५० रु. , **पृष्ठ** - ६०८

परिचय- महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्ष ग्रन्थों के अध्ययन पर बहुत बल देते थे। विशेषकर व्याकरण पर, जो कि सब शास्त्रों की कुंजी है। संस्कृत व्याकरण को सरल एवं सुगम बनाने के लिये उन्होंने पाणिनीय व्याकरण के सहायक ग्रन्थों के रूप में 'वेदांग प्रकाश' नाम से १४ पुस्तकें लिखीं। उनमें से आठवाँ भाग यह 'आख्यातिक' है। इसमें मूलत: धातु पाठ की व्याख्या है। साथ ही उन धातुओं के रूप निर्माण की प्रक्रिया को भी समझाया गया है।

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाता धारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

यज्ञीय जीवन की आवश्यकता

प्रो. धर्मवीर

विद्वानों का विचार है कि नास्तिक व्यक्ति जीवन के प्रारम्भ में अतिशय उत्साहयुक्त प्रतीत होता है, परन्तु आयु की वृद्धि के साथ-साथ वह जीवन में निराशा और उत्साहहीनता की ओर बढ़ने लगता है। अन्त में उसे जीवन कठिन लगता है और वह आत्मघात करने की सोचता है। कभी-कभी ऐसा कर भी बैठता है। यदि इस निराशा के समय उसमें ईश्वर के प्रति विश्वास जाग्रत हो जाये तो उससे नवजीवन का संचार हो जाता है। इस प्रकार आशावान् हो सकना ही जीवन का आधार है, क्योंकि मनुष्य अल्पज्ञ और अल्पशक्ति वाला प्राणी है। अपूर्णता-अभाव से उत्पन्न निराशा दु:ख का उत्पादक कारण है।

इस बात की सत्यता की ओर ध्यान आकर्षित करते हुए उपनिषद्कार ऋषि कहता है **''भूमा वै सुखं नाल्पे सुखमस्ति''** जो स्वल्प है उसमें सुख देने का सामर्थ्य नहीं अत: अधिक के लिए, पूर्णता के लिए प्रयत्न करना आवश्यक है। वह पूर्णता का प्रयत्न आस्तिक भावना के द्वारा ही सफल हो सकता है, इसके सिवाय कोई उपाय नहीं। ऐसा करना इस कारण आवश्यक है कि कोई भी अपूर्ण, आधी-अधूरी वस्तु और विचार, पूर्णता का ज्ञान नहीं करा सकता। इसलिए पूर्ण का अवलम्बन ही मनुष्यों को पूर्णता अनुभव करा सकता है। मनुष्य की अवलम्बन खोजने की प्रवृत्ति उसे अपने अल्प को पूर्ण करने की इच्छा ही है, इसलिए प्रत्येक अल्प किसी का सहारा लेता है। आस्तिक का सहारा तो स्पष्ट है, परन्तु नास्तिक भी किसी न किसी का आश्रय लेता है और आश्रय में पूर्णता की भावना करता है। इस आस्था का स्वीकृत आधार गुरू, सिद्ध, महापुरुष, नेता, स्मारक, पुस्तक कुछ भी क्यों न हो, होता अवश्य है, जिसके प्रति व्यक्ति समर्पित होता है। वह ऐसा करने के लिए बाध्य है। इसी कारण ईश्वर को सर्वशक्तिमान्, सर्वव्यापक, सर्वज्ञ आदि विशेषण दिये गए हैं। उस पूर्णता का आश्रय लेना-अवलम्बन स्वीकार करना अध्यात्म की ओर अग्रसर होने का मूल मन्त्र है और इस संसार में सुख का आधार भी है।

ईश्वर को श्रेष्ठ गुणों वाला स्वीकार करने पर मनुष्य में आस्तिक बुद्धि का उदय होता है। यही विचार यज्ञीय भावना का विकास करता है। यज्ञीय जीवन में व्यक्ति देवताओं को प्रभावित करता है और देवताओं की कृपा प्राप्त करता है और परमश्रेय-अन्तिम कल्याण को प्राप्त करता है। **''परस्परं भावयन्त: श्रेय: परमवाप्स्यथ''** इस प्रकार स्वयं का एवं समाज का सर्व प्रकार का हित करने का नाम यज्ञ है। इस प्रक्रिया से मनुष्य के भौतिक, आध्यात्मिक, सामाजिक एवं व्यक्तिगत सभी उद्देश्य पूर्ण होते हैं। इस कारण वैदिक समाज-व्यवस्था में पंचमहायज्ञों की परम्परा को दैनिक जीवन में अपनाने का विधान किया गया है। इस परम्परा के पालन करने से सभी कर्त्तव्यों का निर्वाह होकर सांस्कृतिक उपाय से पूर्णता की ओर अग्रसर होना सम्भव होता है। सबको साथ लेकर व्यक्ति पूर्ण का साक्षात्कार कर सकता है।

आज यज्ञ के नाम पर प्रचलित अनुचित एवं अर्थहीन परम्परायें, उसमें कालक्रम से स्वत: आने वाली जीर्णशीर्णता का प्रतीक हैं। उनमें पर्याप्त समय से परिमार्जन करने का अवसर नहीं आया। इस आवश्यकता को अनुभव करते हुए वर्तमान युग में यज्ञ को कर्मकाण्ड की थोथी प्रक्रिया से ऊपर उठाकर उसे ज्ञान-विज्ञान का स्थान बतलाते हुए स्वामी दयानन्द ने उसके आध्यात्मिक लक्ष्य की पुन: प्रतिष्ठा की। इस प्रकार मध्यकालीन परम्परा में जहाँ यज्ञ केवल कर्मकाण्ड हैं, जिसमें वर्णित जटिल विधियाँ सम्पादन कर सकना ही यज्ञ की सफलता है- उसका परम लक्ष्य है। इस प्रकार यज्ञ की प्रक्रिया से समय की धारा के साथ प्राप्त होने वाली मलिनता और उसके परिणामस्वरूप उत्पन्न अवैज्ञानिक बातों ने यज्ञ को तर्कहीन और सभ्य समाज के लिए अग्राह्य बना दिया था। उसकी उपयोगिता जटिल विधियों से आवृत होकर यज्ञ अरुचिकर बन गया था। ऐसे समय में स्वामी दयानन्द ने यज्ञ के मौलिक स्वरूप को उद्भावित करते हुए स्पष्ट रूप से प्रतिपादित किया कि यज्ञ शब्द का रुढ़ार्थ ही अग्निहोत्र है, परन्तु यथार्थ में पृथ्वी से लेकर परमात्मापर्यन्त समस्त पदार्थों के ज्ञान-विज्ञान की प्रक्रिया का नाम यज्ञ है। यौगिक अर्थ के विचार से इस बात का भली प्रकार बोध हो जाता है। इस प्रकार स्वामी जी ने यज्ञ की जटिलता को दूर करके कर्मकाण्ड की प्रक्रिया को साध्य कोटि से हटाकर उत्कृष्ट लक्ष्य के साधन के रूप में समाज के सम्मुख प्रस्तुत किया और इस यज्ञ को ही व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में सामंजस्य उत्पन्न करने का आधार

बतलाया और कहा **'एते पंचमहायज्ञा मनुष्यैर्नित्यं कर्त्तव्याः'**, इन पाँच महायज्ञों का मनुष्यों द्वारा प्रतिदिन निर्वाह किया जाना चाहिए।

पाँच यज्ञों में ब्रह्मयज्ञ-संध्या, देवयज्ञ-अग्निहोत्र, पितृयज्ञ, अतिथि यज्ञ और बलिवैश्वदेव यज्ञ परिगणित हैं। प्रथम दो यज्ञ मनुष्य के व्यक्तिगत जीवन में आध्यात्मिक सुख और भौतिक उत्कर्ष को प्रदान करने वाले हैं तथा शेष तीन यज्ञों में से दो यज्ञों द्वारा पारिवारिक एवं सामाजिक अनुष्ठान का सम्पादन किया जाता है तथा पाँचवें महायज्ञ से प्राणिमात्र के कल्याण की भावना को व्यावहारिक रूप प्रदान किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक बुद्धिमान् मनुष्य के लिए ईश्वर को जानना, मानना और उसकी उपासना करना परम कर्त्तव्य है। ऐसा न करने वाला व्यक्ति कृतज्ञता आदि गुणों से रहित होकर कृतघ्नता आदि दोषों का भागी बनता है। **ब्रह्मयज्ञ** अर्थात् ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना करना इसलिए आवश्यक है, क्योंकि ऐसा करने से स्तुति से स्तुत्य के स्वरूप का कथन होकर तत् सदृश गुण कर्म स्वभाव की सिद्धि होती है। प्रार्थना से निरभिमानता और उत्साह की प्राप्ति होती है तथा उपासना से परब्रह्म की प्राप्ति और साक्षात्कार संभव है। इस प्रकार उपासना द्वारा आत्मिक बल की वृद्धि होकर कष्ट सहने का सामर्थ्य आ जाता है, जिससे पर्वत के समान कष्ट या दुःख आने पर भी मनुष्य विचलित नहीं होता। इस प्रकार का सामर्थ्य अन्य किसी भी उपाय से प्राप्त होना संभव नहीं। **देवयज्ञ** अर्थात् अग्निहोत्र प्रतिदिन प्रातः-सायं दोनों समय किये जाने का विधान है। इससे रोगनाशक सुगन्धित पदार्थों का होम मन्त्रपाठ द्वारा करते हैं। मन्त्रपाठ से वेदमन्त्रों को स्मरण, ज्ञान की रक्षा आदि प्रयोजन सिद्ध होना कहा गया है। इस वास्तविक अर्थ को न समझने के कारण यज्ञ में अनेक अनर्थ होते दिखाई देते हैं।

यज्ञीय भावना द्वारा व्यवहार करने से संसार का सन्तुलन बना रहता है। आज सन्तुलन का अभाव प्रत्येक क्षेत्र में देखने में आ रहा है, जिसके परिणामस्वरूप समाज के सम्मुख घोर संकट उपस्थित हो गया है। आज प्रकृति की दिव्य वस्तुओं का अविचारित उपयोग होने से सन्तुलन में न्यूनता आ रही है और अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। प्रमुख रूप से आध्यात्मिक जगत् में सन्तुलन के अभाव से भौतिक जगत् में जलवायु आदि प्रदूषण की समस्या प्रमुख रूप से हमारे सामने है। वायु, जल, देश और काल के प्रदूषण से प्राणिमात्र के जीवन को खतरा उत्पन्न हो गया है। इसका कारण यज्ञीय भावना का अभाव है। शास्त्रकार इसी को प्रज्ञापराध कहते हैं। प्रज्ञापराध कर्त्तव्यच्युति है। समाज में जब व्यक्ति सामाजिक दायित्वच्युत हो जाता है, व्यक्तिगत, संकुचित स्वार्थ ही जीवन का ध्येय बन जाते हैं, उससे उत्पन्न परिणामों को भोगने के लिए समाज बाध्य होता है। मनुष्य केवल अपने बारे में सोचता हुआ केवलाघ होता पाप का भक्षण करता है। विचारक का दृष्टिकोण है कि पाप भावना का मूल कारण आलस्य है और आलस्य का मूल अतिभोजन है। आचार्य चरक की मान्यता है कि मनुष्य अधिक भोजन करता है तो शरीर में भारीपन और स्थूलता से श्रम के प्रति अरुचि तथा श्रम के अभाव में आलस्य, आलस्य के परिणामस्वरूप संचय और संग्रह करने की प्रवृत्ति का उदय होता है। इस तरह व्यक्ति वस्तुओं का संग्रह करता हुआ परिग्रही बन जाता है। परिग्रह से लोभ, लोभ से द्रोह और परिणामतः द्रोह से ग्रस्त व्यक्ति असत्य भाषण, असत्याचरण करता है। समाज में असामाजिक प्रवृत्तियों का जन्म होता है। व्यक्ति क्षुद्र स्वार्थों के लिए असंख्य लोगों की असीम हानि करने में संकोच नहीं करता। इस मानसिक प्रदूषण से भूमि, जल और वायु का प्रदूषण हो जाता है, जिससे संसार की अपार हानि होती है। इस हानि से बचने का उपाय यज्ञ है। **प्रत्येक व्यक्ति में जब तक यज्ञीय भावनाओं का उदय नहीं हो जाता, तब तक संसार का उपकार नहीं हो सकता। यज्ञ से ही कल्याणकारी वायु बहती है, यज्ञ से तपने वाला सूर्य कल्याणकारी बनता है और यज्ञ से ही जीवनाधार पर्जन्य कल्याणकारी बनकर बरसता है। इसलिए कहा गया है कि 'यज्ञाद् भवति पर्जन्यः' इस प्रकार एक समान्य-सी प्रतीत होने वाली प्रतीकात्मक प्रक्रिया में संसार में स्वयं सुखी होने और प्राणिमात्र को सुखी करने का उपाय निहित है।** अतः इस प्रक्रिया को उसके वास्तविक स्वरूप में प्रचलित करने की आवश्यकता है। इस प्रक्रिया में विधियों का महत्त्व तो कर्म, सौकर्म और सामाजिक एकरूपता के लिए है, अतः देशकाल की परिस्थिति पर विचार करके विद्वान् लोग उसमें परिवर्तन और परिवर्धन कर सकते हैं। इसी भावना को लक्ष्य में रखकर स्वामी जी पंचमहायज्ञ विधि में लिखते हैं कि **यद् यद् आवश्यक युक्ति-सिद्ध है वही करना योग्य है, अन्य नहीं। इस प्रकार मनुष्य का कल्याण यज्ञ से और यज्ञीय भावना से ही संभव है, अन्य किसी प्रकार नहीं।**

अतिथि यज्ञ के होता बनें

महर्षि दयानन्द सरस्वती की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा आर्य जगत् की एकमात्र ऐसी संस्था है जो सामूहिक सहयोग से ऋषि द्वारा निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु कृत संकल्प है।

सभा निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। निरंतर अबाध गति से ऋषि उद्यान को आकर्षक एवं जन उपयोगी बनाने हेतु नव निर्माण करा रही है, वेद प्रचार पूरे देश में संचालित कर रही है, वेदों का एवं ऋषि ग्रंथों का प्रकाशन निरंतर जारी है।

प्रातः एवं सायं दैनिक यज्ञ- प्रवचन, वेद-पाठ, उपनिषद्, दर्शनादि शास्त्रों की कथा द्वारा वैदिक धर्म का कार्य नियमित रूप से आश्रम में चलता है। ***गुरुकुल***- आर्ष पद्धति से संचालित गुरुकुल में पढ़ रहे ब्रह्मचारी जो साधना एवं समाज सुधार का लक्ष्य लेकर अध्ययनरत हैं उनकी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति निःशुल्क की जाती है। ***अतिथि सेवा***- अतिथियों को यथोचित सुविधा प्रदान करने हेतु सभा पूर्णरूपेण प्रयासरत है एवं सभी सुविधाएँ आवास, प्रातराश, भोजन की व्यवस्था निःशुल्क की जाती है। ***गोशाला***- गोशाला में चालीस के लगभग पशु हैं। इससे अधिक का स्थान नहीं है। आश्रमवासियों को गोशाला में उत्पादित दुग्ध का निःशुल्क वितरण किया जाता है। ***वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम***- वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम में रहकर साधनारत वानप्रस्थियों एवं संन्यासियों की सभी प्राथमिक आवश्यकताओं की पूर्ति सभा द्वारा निःशुल्क की जाती है। स्वाध्याय एवं साधना की व्यवस्था है। ***विशाल पुस्तकालय***- इसमें दुर्लभ ग्रंथों का संग्रह है, सभा द्वारा शोधकर्ता छात्रों को शोध कार्य हेतु ग्रंथ निःशुल्क प्रदान किए जाते हैं जिनका लाभ स्वाध्यायशील व्यक्ति भी उठा सकते हैं। ***व्यायामशाला***- योग्य शिक्षक द्वारा नगर के युवाओं को ऋषि उद्यान में निःशुल्क व्यायाम प्रशिक्षण दिया जाता है। सभा द्वारा नियुक्त व्यायाम शिक्षक आसपास के गांवों में भी आर्यवीर दल का प्रशिक्षण शिविरों में प्रदान करते हैं।

ये सभी क्रियाकलाप आपके पावन उदार सहयोग से ही संभव हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि सभा का आधार ही आकाशीय दानवृत्ति है। आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन १० रुपये अथवा प्रतिवर्ष ५ हजार की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशन भी किया जाता है।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उसका उल्लेख आश्रम के सूचना पट्ट पर किया जा सकेगा।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा शिविरों के आयोजन द्वारा जन सामान्य को ऋषियों की जीवन प्रणाली सिखा रही है। आप इस योजना में स्थायी सदस्य बनकर ऋषि का संकल्प *संसार का उपकार* की पूर्ति में एक स्तम्भ बनकर सभा को सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अतः आपसे निवेदन है कि आप भी अतिथि यज्ञ के होता बनिये। जिन महानुभावों ने हमारा निवेदन स्वीकार कर यज्ञ में अपनी आहुति दी है, उनके नाम यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३१ अक्टूबर २०१८ तक)

१. श्री सतीश कुमार, मुजफ्फरनगर २. श्री भास्करसेन गुप्ता व श्रीमती सुयशा आर्य, सीएटल, अमेरिका ३. स्वास्तिकॉम चेरिटेबिल ट्रस्ट, अमरावती ४. सुश्री समर्था पाण्डे, अजमेर ५. श्री वृद्धिचन्द गुप्त, जयपुर ६. श्रीमती सुमनलता आर्य, शाहजहाँपुर ७. श्रीमती उषा मारवाह, नई दिल्ली।

– **परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गौशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गौ-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गौशाला के दानदाता

(१६ से ३१ अक्टूबर २०१८ तक)

१. श्री वृद्धिचन्द गुप्त, जयपुर २. सुश्री कुसुम भटनागर, अजमेर ३. श्री प्रकाश चतुर्वेदी, मुम्बई ४. श्री रतनलाल कंवरलाल पाटनी फाउंडेशन, मदनगंज, किशनगढ़ ५. श्री सुदर्शन कुमार कपूर, पंचकुला ६. श्री ब्रजभूषण गुप्ता, पंचकुला ७. श्रीमती सुमनलता आर्य, शाहजहाँपुर ८. श्रीमती स्नेहलता, अम्बाला शहर ९. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बाला कैन्ट १०. श्री आर.के. अरोड़ा, दिल्ली।

– **परोपकारिणी सभा, अजमेर।**

लेखकों से निवेदन

परोपकारी में उन लेखों, कविताओं, रचनाओं को स्थान दिया जाता है, जो **मौलिक व अप्रकाशित** हों। अत: सभी लेखकों से निवेदन है कि वे अपनी उन्हीं रचनाओं को भेजें जो मौलिक व अप्रकाशित हों।

अनेक लेखक मौलिक व अप्रकाशित रचना तो भेजते हैं, किन्तु उसे एक साथ **अनेक पत्रिकाओं को भेजते हैं।** अत: लेखकों से यह भी निवेदन है कि वे कृपया परोपकारी को वे ही रचना भेजें, जो अन्य पत्रिकाओं के लिए न भेजी हों। परोपकारी में छपने के बाद यदि अन्यत्र भेजना चाहें तो यह उनकी इच्छा पर निर्भर करता है।

कृपया लेख के अन्त में अपना **पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या अवश्य लिखें।** लेख के स्वीकृत-अस्वीकृत होने की सूचना चल-दूरभाष पर संक्षिप्त संदेश द्वारा प्रेषित कर दी जायेगी। **परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।**

रचयिता अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि **अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटाई नहीं जाती हैं।** स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। रचना के प्रकाशन में छ: माह या अधिक समय भी लग सकता है, अत: कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।

-संपादक

स्वर्ग में महासभा

सम्पादकाचार्य पं. रुद्रदत्त शर्मा

हमारी प्यारी भारतमाता आज बाह्यतः स्वाधीन होते हुए भी बौद्धिक दासता की जंजीरों में जकड़ी पड़ी है। इस दिमागी गुलामी का मूल है-पौराणिक बहुदेवतावाद। यह बहुदेवतावाद जहाँ अनेक अवतारों, मूर्ति-पूजनादि विचित्र पाखण्डों, अन्धविश्वासों और विभिन्न मत-मतान्तरों का जनक है वहाँ इनकी कल्पना कितनी हास्यास्पद, लज्जाजनक और बुद्धि-विद्या, विज्ञान एवं विवेक-विरोधिनी है, इसका जैसा सफल चित्रण स्वर्गीय सम्पादकाचार्य पं. रुद्रदत्त जी शर्मा ने अपनी इन व्यंग्य-कथाओं के रूप में किया है, वह देखते ही बनता है।

इन व्यंग्य कथाओं को पढ़ते समय साधारण पाठकों को किसी तरह की कोई भ्रान्ति न हो, इस दृष्टि से निवेदन है कि वैदिक धर्म-ब्रह्मा, विष्णु, शिव, यमराज, चित्रगुप्त, इन्द्र, बृहस्पति, वायु आदि देवताओं के अलग-अलग अस्तित्व को नहीं स्वीकारता। वेद की मान्यता है-ईश्वर एक है। 'एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति' के अनुसार उस एक ही ईश्वर के ये सभी तथा अन्य असंख्यों नाम हैं। यहाँ इनका वर्णन व्यंग्य रूप में किया गया है। पौराणिक देवताओं के मुख से ही उनकी दयनीय दशा का वर्णन पौराणिक पोपजाल का पर्दाफाश कर देता है- सम्पादक

कालचक्र के पहिए को घुमाते हुए सूर्यनारायण ज्यों ही उत्तरायण हुए त्यों ही देवलोक में घोर घबराहट मच गई। इस घबराहट के कारणों को यदि लिखा जाय तो एक करोड़ श्लोकों का 'महा महाभारत' बन जाय। तो भी पाठकों के सन्तोषार्थ संक्षेप से दो-चार कारणों का वर्णन करना आवश्यक जान पड़ता है।

इस घबराहट का खास कारण तो यह था कि मिस्टर टक्कर ने फक्कर बन के जबसे मुक्ति सेना बनाई और वार क्राई (War Cry) समाचार-पत्र निकाला, तब से देवता लोगों को हर समय यही सन्देह और भय बना रहता है कि न मालूम किस समय टक्करासुर के सैनिक स्वर्ग में सीढ़ी लगा के चढ़ आवें और हम लोगों को मार के स्वर्ग से निकाल दें। गत २१ दिसम्बर सन् १८९६ को फ्री मिशन के देवता ने स्वर्ग में जा के देवताओं से प्रार्थना की कि महाराज मुझे कृष्टानों ने मार के भगा दिया, मृत्युलोक से मेरी उपासना को ईसाई उठाना चाहते हैं। आप सब कौमपरवर हैं, लिहाजा मेरी रक्षा करना आप लोगों का फर्ज है। फ्री मिशन चर्च के देवता की प्रार्थना को सुन के देवराज इन्द्र को ध्यान आया कि 'सब्जैक्ट कमेटी' में जो पब्लिक मीटिङ्ग वा महासभा का प्रस्ताव हुआ था उसको अब करना चाहिए। देवराज इन्द्र इस विचार में बैठे ही थे कि इतने में असंख्य पितरों ने देव-दरबार को घेर लिया और चिल्ला के दुहाई देने लगे। इनकी चिल्लाहट को सुन के महाराज इन्द्र भी घबराए और अपने द्वारपाल से बोले कि इन सबको खामोश करके दरबार में हाजिर करो। हुक्म पाते ही द्वारपाल सबको बुला लाया।

उन सब ने हाथ जोड़ के विनय करी कि महाराज हम लोग बड़े कष्ट में हैं। हममें से अधिक लोग अरब, इङ्गलिस्तान के रहने वाले हैं, हम लोगों ने जितने सुकर्म किए थे उनमें से किसी का भी हमको फल नहीं मिला और न हमारे पुत्र हमारा श्राद्ध ही करते हैं जो हमको यहाँ पर खाने को मिले, लिहाजा हम सब भूखों मरे जाते हैं। अगर हमको पहले से यह अन्धेर मालूम होता तो हम कभी सुकर्म नहीं करते।

इन लोगों की बात की आर्यावर्त्तीय पितरों ने भी ताईद की और कहा कि बेशक ये लोग सत्य कहते हैं, अगर हम लोग जानते कि सुकर्म और कुकर्म करने वालों को स्वर्ग में एक ही स्थान मिलता है तो हम लोग क्यों सुकर्म करते? देखिए! जिस महिषासुर ने बड़े-बड़े महर्षियों को सताया, आप सब लोगों को युद्ध में छकाया, वही आज मुक्त पदवी पा के आनन्द भोग रहा है। इसके अतिरिक्त रावण और वाणादि अनेक अन्यायी राक्षस मुक्त हो चैन उड़ा रहे हैं, तब अन्य लोगों का सुकर्म करना झख मारना नहीं तो क्या है? महाराज! आप इस लवण धौं-धौं को मिटाइये, नहीं तो जगत् में अन्धेर हो जायगा।

इन लोगों की अर्ज पूरी भी नहीं हुई थी कि इतने में

देवताओं के एक दल ने जाकर इन्द्र महाराज से प्रार्थना की कि "हे देवराज! आजकल हम लोग भूखे मर रहे हैं, कहीं पर यज्ञ नहीं होता जो हमको भाग मिले, यज्ञ के बिना उत्तम धुआँ नहीं होता, धुआँ ही नहीं तो बादर काहे के बनें, बस बादरों के अभाव से वर्षा का अभाव हो रहा है, अवर्षण से संसार की यह दशा है कि शाकम्बरी देवी (मार्कण्डेय पुराण में लिखा है कि शाकम्बरी देवी ने १२ वर्ष तक देवताओं को शाक खिला के जिलाया था) की तरकारी भी सूख गई, जो हमारे भक्त पहिले बर्फी और पेड़ों का भोग लगाया करते थे अब उनको बाजरे की रोटी भी नहीं मिलती है।"

इन लोगों को ताईद करते हुए काशीपति विश्वनाथ बोल उठे-"महाराज! बेशक, आजकल देवताओं को बड़ा कष्ट है मेरी ही दशा देखिये न? मैं जो एक बार भङ्ग की तरङ्ग में यवन के डर से ज्ञानवापी कुएँ में जा गिरा था तो काशी के पण्डों ने मेरी एवज में एक अन्य कायम मुकाम (officiating) विश्वनाथ बना लिया। मगर आश्चर्य यह है कि अब तक भी कोई मेरा भक्त मुझे कुएं से नहीं निकालता है, हालाँकि मेरा मगज चावल और सड़े पानी की बदबू से सड़ा जाता है और मैं कुएं में पड़ा-पड़ा महाकष्ट भोग रहा हूँ और मेरा कायम मुकाम मुस्तकिल (permanent) विश्वनाथ बनके गुलछर्रे उड़ा रहा है। हे देवराज! यदि आप हम लोगों के कष्ट को दूर न करेंगे तो हम सब मिलके बलि को देवराज बना लेंगे।"

इन सब की बातों को सुनके देवराज इन्द्र ने मुस्करा के कहा- "हाँ भाई अब तो तुम्हारी नजर बढ़ गई है, अब आप लोग अमेरिका की ओर क्यों न देखेंगे? मगर याद रखिये कि अब यहाँ बलि का बल नहीं है, अब तो पाताल में रिपब्लिकन गवर्नमेण्ट (प्रजातन्त्र) हो गई है। अगर, स्वर्ग में भी वही साम्यवाद आप लोग चलावेंगे तो हम भी मृत्युलोक के मनुष्यों की महाकांग्रेस करा के आप लोगों की भक्ति को नेस्तनाबूद कर देंगे। स्मरण रखिये कि जैसी उन्नति हम आप लोगों की कर सकते हैं वैसी उन्नति विदेशीय राजा बलि नहीं कर सकता है। मैं अभी सब संसार के देवताओं की महासभा करके आप लोगों के दु:ख दूर करने के उपायों को बड़े यत्न से करूँगा।"

इतना कहके महाराज इन्द्र ने समस्त दिग्पाल और सूर्य, चन्द्रमा आदि प्रधान-प्रधान देवताओं को सम्मति करने के वास्ते बुलाया। वह लोग पलक मारते देवराज की अमरावती इन्द्रपुरी में आ विराजे।

प्रथम सबकी सम्मति से एक मैनेजिङ्ग कमेटी कायम की गई। चूंकि इस कमेटी का खास काम नोटिस देना व सभा के वास्ते स्थानादि का प्रबन्ध करना था, इस कारण श्री सूर्य्यनारायण इसके सभापति, चन्द्रमा उपसभापति और अग्निदेव सेक्रेटरी नियत किये गये। प्रथम मैनेजिङ्ग कमेटी के मेम्बरों की राय हुई कि श्री विघ्नविनाशक लम्बोदर से विज्ञापन लिखा के वितीर्ण किये जायें, परन्तु श्री शुक्राचार्य्य ने कहा कि अब यह जमाना नहीं है जबकि हाथ से लिखकर परदेश दिशावरों को चिट्ठी भेजी जाती थीं अब तो **'एन्लाइटेण्ड'** (रोशनी का) जमाना है इसलिये किसी प्रेस में दो-चार अरब नोटिस छपा के बाँट देना चाहिये, आजकल **'फीमेल एजूकेशन'** (स्त्री-शिक्षा) तरक्की पर है, लिहाजा सरस्वती देवी पल मात्र में नोटिस कम्पोज करके छपा सकती हैं। इन सबकी बातों को सुन के भुवनभास्कर भगवान् बोले कि नोटिस बाँटने व छपाने की कोई जरूरत नहीं है क्योंकि **'इण्टेलीजेन्स डिपार्टमेण्ट'** (समाचार विभाग) ने इतनी उन्नति कर ली है कि पलक मारते सारे संसार में सभा के समाचार पहुँच जायेंगे, मैं **हेलोग्राफ** (सूर्य की किरणों के द्वारा जो समाचार भेजे जाते हैं) के द्वारा मेरे मित्र शीतरश्मि (चन्द्रमा) **'नाइट सिग्नेल'** के द्वारा और अग्निदेव जी महाराज 'तड़िद्ग्राम' (तार) के द्वारा पलक मारते सर्वत्र समाचार पहुँचा देंगे। आप लोग विज्ञापन बाँटने की चिन्ता को छोड़ के दूसरे प्रबन्ध कीजिए। मैनेजिङ्ग कमेटी की सम्मति से अमरावती के टाउनहॉल में वसन्तपंचमी को सभा का होना स्थिर हुआ। सभा में अधिक भीड़ होने की सम्भावना थी, इस कारण **इन्सपेक्टर जनरल ऑफ डिवाइन-हॉस्पिटल्स सिविल एण्ड मिलिट्री** (अश्विनी कुमारों को) बुला के आज्ञा दी गई कि आप अपनी डिस्पेन्सरी के सहित सभा-मण्डप के दाहिनी ओर हर समय हाजिर रहिए क्योंकि आजकल **बोवोनिक प्लेग** (महामारी) का अधिक भय है, इसके अतिरिक्त **डिवाइन मेल सर्विस** के सुपरिण्टेण्डेण्ट वायुदेव की आज्ञा मिली

कि तुम हर समय यहाँ हाजिर रहो और जिस सभासद् का कहीं कोई पत्र आवे फौरन उसे उसके पास पहुँचा दो।

इन प्रबन्धों के करने के पश्चात् मैनेजिङ्ग कमेटी ने विदेशी देवताओं के वास्ते टाउनहॉल के हाते में एक होटल तैयार कराया और योरोपियन देवताओं के वास्ते भोजन पकाने के निमित्त मातङ्गिनी देवी को उच्छिष्ट चाण्डालनी के सहित सम्पूर्ण सामग्री दे के नियत कर दिया। बंगदेशीय देवताओं के वास्ते मत्स्यप्रिया बंगलामुखी नियुक्त की गई। यवनदेशीय और अफ्रीका के देवताओं के खान-पान का प्रबन्ध करने को कज्जलगिरिनिभा काली जी नियत की गईं। ऐसे ही चीन, जापान और मलाया आदि द्वीपों के देवताओं के खान-पान का प्रबन्ध करने को बागेश्वरी और पद्मा देवी को (यह दोनों देवी बौद्ध सम्प्रदाय में मानी जाती हैं) आदेश मिला। मैनेजिङ्ग कमेटी ने इस प्रकार से सबके खान-पान का प्रबन्ध करके टाउनहॉल के द्वार पर (Welcome to Holy Gods) सुन्दर अक्षरों में लिख के लगवा दिया और द्वारपालों को आज्ञा दे दी कि जो कोई सभा में विघ्न डालने के अभिप्राय से कुछ काम करे उसको जहन्नुम रसीद करो और जो सीधे स्वभाव से सभा में जाना चाहे उसे हर्गिज मत रोको।

प्रबन्ध करते ही करते बसन्तपंचमी का दिन आ गया। उस रोज प्रातःकाल ही से सभा-मण्डप में देवताओं का आना आरम्भ हुआ। सब लोग अपने-अपने ब्लॉक में जा बैठे। ए. ब्लॉक में ऑरिजिनल (असली) देवताओं के वास्ते कुर्सियों की कतार लगी हुई थी और उस ही के बीच में सभापति के वास्ते एक रत्न-जटित सिंहासन बिछा हुआ था। इसके दाहिनी ओर बी. ब्लॉक था, इसमें महर्षि-मण्डल तथा वेदों के मानने वाले मुक्त जीवों के वास्ते कुर्सियाँ बिछी हुई थीं, बाईं ओर सी. ब्लॉक में यूरोप तथा अरब आदि देशों के देवता तथा पैगम्बर लोग विद्यमान थे ओर डी. ब्लॉक में मॉडर्न (नये जमाने के) ऋषि तथा धर्माचार्य लोग विराजमान थे।

देवियों को आसन देने के समय प्रबन्धकर्त्ताओं में वैमनस्य हो गया क्योंकि कई एक की सम्मति थी कि देवियों को देवताओं के बीच में आसन न मिलना चाहिए क्योंकि पुराणमत वाले स्त्रियों को सभा में बिठलाना पाप समझते हैं। दूसरे कहते थे कि जिस दुर्गा देवी ने महिषासुर को और शुम्भ-निशुम्भ आदि दैत्यों को युद्ध में मारा वह अब किससे पर्दा करेंगी? खैर अन्त में यह स्थिर हुआ कि ए. ब्लॉक के पास ही एक फीमेल क्वार्टर बनाया जाय और सब देवी उस ही में बैठ के सभा को देखें और आवश्यकतानुसार सम्मति भी दें।

इसके अनन्तर प्रबन्धकर्त्ताओं ने जो डी. ब्लॉक की ओर देखा तो वहाँ पूरी अशान्ति पाई, कुछ लोग आगे बैठने के वास्ते आपस में झगड़ा कर रहे थे। इस कोलाहल को सुनकर मैनेजिङ्ग कमेटी के सभापति ने सबको यथास्थान बिठला के शान्ति की। जब सब लोग यथास्थान बैठ गये और सभा में शान्ति स्थापित हो गई, तब रिसेप्शन कमेटी वा अभ्यर्थना-सभा के सभापति कुमार जयन्त ने इस प्रकार से अपना व्याख्यान आरम्भ किया।

व्याख्यान- देव, देवी, ऋषि, मुक्त और धर्माचार्यवृन्द! मैं आप लोगों को धन्यवाद देने योग्य नहीं हूँ क्योंकि कलियुगी रामायण में मुझे कौवा लिख दिया है भला सोचिए तो सही कि मैं अपने देव स्वरूप को त्यागकर काक क्यों बनता? प्रथम तो योगी के बिना किसी को यह शक्ति ही ईश्वर ने नहीं दी कि अपने शरीर को बिना मृत्यु के छोड़ के दूसरा शरीर धारण करे, यदि मुझे योगी ही माना जाय तो क्या योगी इतना भी नहीं समझ सकता कि श्रीरामचन्द्रजी की धर्मपत्नी सती साध्वी पतिव्रता सीता जी पर पुरुष से प्रीति नहीं कर सकतीं हैं, वहाँ मैं झख मारने क्यों जाऊँ? फिर उस ही रामायण में यह भी लिखा है कि महाराज रामचन्द्रजी ने मेरी एक आँख फोड़ डाली, परन्तु देखिए मेरे दोनों नेत्र-कमल से खिले हुए हैं, यदि कहिए कि कौवे रूप की आँखें फोड़ दी थीं और इसी कारण अब तक भी सब कौवे काणे होते हैं तो यह महा अन्याय है कि अपराध करूँ मैं, आँख फोड़ी जाय कौओं की। इसके अतिरिक्त श्रीरामचन्द्रजी के और मेरे जन्म से भी पूर्व काकभुशुण्ड का होना पुराणों में लिखा है, परन्तु उसके भी दो नेत्र नहीं लिखे। अस्तु मैं अपनी अधिक सफाई देना नहीं चाहता हूँ क्योंकि मृत्युलोक के मनुष्यों ने कुछ मुझे ही दोष नहीं लगाया है वरन् भगवान् विष्णु को भी दोषों का भण्डार बना दिया है। देवताओं की दुर्दशा को दूर करने के वास्ते

जो आप लोग लाखों कोस से यहाँ आये और अमरावती के टाउनहॉल को सुशोभित किया, इस कारण मैं आप लोगों को अरबों धन्यवाद देता हूँ।

इस स्पीच के समाप्त होते ही महाराज कुबेर ने प्रस्ताव किया कि आज की जनरल कमेटी में भगवान् विष्णु सभापति बनाये जाएँ। यद्यपि इसका अनुमोदन अनेक लोगों ने किया, परन्तु विष्णु भगवान् ने यह कह के इसे अनङ्गीकार किया कि हम तो आजकल किसी काम के ही नहीं रहे हैं। जब से शङ्कराचार्य ने वेदों की जड़ काटने को **सेल्फ गवर्नमेन्ट** चलाया, तब से छोटे-छोटे बालक भी खुद खुदा बन गये हैं। सृष्टि करने और वेद बनाने के समय हम एक ही स्वतन्त्र थे, पर सृष्टि का और वेदों का नाश करने को करोड़ों ब्रह्म बनाये हैं। अब तो हम केवल स्त्रियों की कसम खाने को ही रह गये हैं, और देखिये! जो हमारे भक्त बनने का दम भरते हैं वही हमको गाली देते हैं-'**महावराहो गोविन्दः** (विष्णु सहस्रनाम) अर्थात् विष्णु बड़ा वराह है।' कहिये, किसे गरज है जो आपका सभापति बनके गाली खाए।

विष्णु भगवान् की बात को सुन के भोलानाथ शङ्करजी हँसते-हँसते खड़े हुये और मुस्करा के कहने लगे कि गाली से क्यों घबड़ाते हो? १६१०८ पटरानी और मनोहारिणी बृज-वनिताओं का रसास्वादन भी तो आपको ही कराया गया, '**क्या कडुये-कडुये थू और मीठे-मीठे गप**' की कहावत को चरितार्थ करना चाहते हैं? रास करते वक्त तो छः महीने की रात कर दी और कुछ भी न शर्माये पर अब जरा देर तक को सभापति बनते आपकी नानी मरती है, क्या गोपियों का यह गीत अच्छा लगता था कि-

फणफणार्पितन्ते पदाम्बुजम्। कृणुकुचेषुनश्चारुहृच्छयम्

-और प्रेमातुर भक्तों के मुख से महावराह शब्द को सुनके कान कटे पड़ते हैं? कैलाशवासी शम्भु की बात को सुनके सरस्वती देवी के पिता श्री ब्रह्माजी खड़े हो के बोले, ''चूंकि विष्णु के दोषों पर इस सभा में विचार किया जायेगा, लिहाजा विष्णु को सभापति बनाना मुनासिब नहीं है। मेरी राय में आज की सभा में भी देवराज इन्द्र ही सभापति के आसन को ग्रहण करें।''

अनेक वादानुवाद तथा अनुमोदन-प्रमोदन होने के पश्चात् देवराज इन्द्र ने सभापति का आसन ग्रहण किया। जिस समय इन्द्र व्याख्यान देने को खड़े हुए उस समय चियर्स और करतल-ध्वनि से टाउनहॉल गूँज उठा।

सभापति का व्याख्यान

देववृन्द! आप लोगों ने जो मुझे इस महती देव-सभा का प्रधान बनाया, यह आप लोगों ने मेरे ऑफिशियल रैंक का मान्य बढ़ाके अपनी नियमवर्तिता का अपूर्व परिचय दिया है। इस महती सभा के महा अधिवेशन का उद्देश्य यह है कि मृत्युलोक के निवासियों ने जो देवता लोगों पर सहस्रों दोष लगाए हैं और धोखा-धड़ी लगा रखी है इससे इन लोगों का ही अपमान नहीं होता है वरन् परमकृपालु परमेश्वर का भी पूरा अपमान होता है। मेरे तो पूरे परिवार को ही पुराण बनाने वालों ने चोर और व्यभिचारी लिख दिया है। नृसिंहपुराण के २८ अध्याय में मेरे पुत्र जयन्तकुमार को लिखा है कि राजा शान्तनु ने एक वृन्दावन बसा के जो अत्यन्त मनोहर बाग बनाया था उसके फूलों को मेरा पुत्र चुरा लाता था, एक दिन माली ने मेरे पुत्र को फूल चुराते देखा और नृसिंह की स्वप्न में प्राप्त आज्ञा से दीवारों पर नृसिंह का निर्माल्य छिड़क दिया। उसके लाँघने से जयन्तकुमार ऐसा शक्ति-हीन हो गया कि वह रथ पर न चढ़ सका। तब सारथी के उपदेश से वृन्दावन में १२ वर्ष रहा और ब्राह्मणों का उच्छिष्ट बटोरता रहा, तब उसके शरीर में शक्ति आई। भला इस कथा के बनाने वालों से कोई पूछे कि जब यवनों ने भारत पर आक्रमण किया और देव-मन्दिरों को तोड़ा, खास नृसिंह की अनेक मूर्तियों को तोड़ के फेंक दिया तब क्या नृसिंह का निर्माल्य नहीं रहा था? जो भारत की सीमा पर छिड़क देते और उसको लाँघने से सब यवन शक्तिहीन हो जाते। इसके अतिरिक्त उसी नृसिंह पुराण के ४३ अध्याय में मुझे व्यभिचारी लिखा है-

जब हिरण्यकश्यप तपश्चर्या करने गया था (जब इन्द्र उसकी गर्भवती स्त्री को उठा के ले गया और उससे व्यभिचार करना चाहा। तब नारद ने इन्द्र को समझाया और कहा कि यह गर्भवती है, उसके उदर में परम भागवत हैं) क्या मैं ऐसा अज्ञानी था कि इतना भी न समझता था कि यह गर्भवती है? खैर, यह तो कुछ बड़ी निन्दा ही नहीं है, मुझसे बढ़के विष्णु को लूलू बनाया है। एक जगह तो

लिखा है कि सब देवताओं के कहने से भृगु ऋषि ने विष्णु के वक्षस्थल में लात मारी, परन्तु विष्णु भगवान् की ऐसी शान्ति बढ़ी कि भृगु के पद को दाबने लगे और कहने लगे आपके कमल सम कोमल पदों को मेरे कठोर वक्षस्थल से बड़ी चोट लगी होगी। दूसरी जगह (भविष्यपुराण ५६ अध्याय) में लिखा है कि विष्णु महाराज ने भृगु की स्त्री का चक्र से सिर काट डाला। कहिए तो उस समय वह शान्ति विष्णु की कहाँ को उड़ गई थी जो अवध्य ब्राह्मणी को भी मार डाला और इसी का यह फल मिला कि अब विष्णु को बराबर अवतार लेना पड़ता है।

मैं सत्य कहता हूँ कि जब से ऐसी-ऐसी फॉल्स रिपोर्ट मेरे आफिस में आने लगीं तब से मेरा दफ्तर भी गन्दा हो गया। मैं सत्य कहता हूँ कि मुझे अब इन रिपोर्टों पर तनिक भी विश्वास नहीं रहा है। जो दान, धर्म दानपात्र के उपकारार्थ था वह अब दिल्लगी मात्र रह गया है, गोदान केवल इस वास्ते था कि वेदाभ्यासी ब्रह्मचारी के नि:शक्त शरीर में शक्ति का संचार हो परन्तु स्वार्थान्ध लोगों ने सुवर्ण धेनु हीरे के दाँत लगा के (भविष्यपुराण उत्तरार्द्ध १३७ अध्याय, भवि. उ. १३८ अध्याय, भवि. उ. १६० अध्याय) दान करना लिखा है। यदि वास्तव में सुवर्ण धेनु को गौ ही समझा जाता है तो उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग को बेचकर खाना क्या महापाप नहीं है अर्थात् तिल का शूकर बना के दान करे। इस दान का ऐसा माहात्म्य लिखा है कि इस दान का करने वाला अपने पुत्र-कलत्र और मित्रों सहित स्वर्ग को चला जाय। सोचिए तो सही कि मनुष्य असली शूकर का दान करें, वह तो स्वर्ग से भी १० हाथ ऊँचा चला जाय।

तीर्थों के माहात्म्यों का जहाँ वर्णन किया है वहाँ तो हास्यरस का अन्त ही कर दिया है। मैंने स्वयम् अपने नेत्रों से देखा है कि प्रयाग के माहात्म्य में लिखा है कि जो मनुष्य ऊपर को पैर और नीचे को सिर करके गङ्गा और यमुना के संगम में आचमन करे तो १०००००० वर्ष तक स्वर्ग में सुख भोगे। (देखो कूर्म पुराण) महाशय वृन्द! मैं कहाँ तक कहूँ इन फॉल्स रिपोर्टों में देवताओं की ऐसी बुराई लिखी है कि जिनको सुनते भी हँसी आती है। गणेश को लम्बोदर और हाथी के सिरयुक्त लिखकर फिर चूहे की सवारी लिख दी है। भला कहिए तो हाथी की सवारी चूही क्यों कर हो सकती है?

प्रिय देववृन्द! आजकल जो भारतवासियों पर स्वार्थी जनों ने टैक्स लगा रखे हैं उनके विषय में मैं केवल एक दृष्टान्त देके अपने व्याख्यान को समाप्त करूँगा।

दृष्टान्त यह है कि एक उजबक नगर नामक शहर में एक गवरगण्डसिंह नामक राजा था। वह राजा अपने नाम के अनुसार ऐसा मूर्ख और आलसी था कि उसके अमले और प्यादे मनमाने कार्य करते थे, परन्तु वह इतना भी नहीं जानता था कि मेरे राज्य में कितने ग्राम हैं और उनका शासन कौन करता है। एक दिन उसकी राजधानी में किसी और राज्य का एक मनुष्य घी बेचने को आया, परन्तु बाजार तक जाते-जाते उसका सम्पूर्ण घी कर अर्थात् ड्यूटी (महसूल) में ही उड़ गया। कहीं राजा का कर, कहीं युवराज का कर, कहीं रानी का कर, कहीं राजमाता का कर, राजभ्राता का कर, कहीं मन्त्री और कहीं उपमन्त्री आदि का कर, लेते-लेते जब उस व्यापारी के कपड़े तक भी सिपाहियों ने छीन लिये तब वह रोता हुआ राजा के पास गया, परन्तु राजा ने उसको धक्के दे के निकलवा दिया। तब उसने समझा कि इस राज्य में अन्धेर है। अतएव मैं भी अन्धेरे में अपना कार्य सिद्ध कर सकता हूँ। बस, वह भी श्मशान के पास जा बैठा और जो मुर्दा उधर जावे उसके ही साथियों से कहे कि हमारा १।) रु. राजकर के नाम से पहिले दे दो, तब प्रेत की क्रिया करो। जब उनसे कोई पूछे कि तुम कौन हो तब ही वह कह दे कि हम रानी के साले हैं। अनेक वर्षों तक वह इस ही रीति से कर लेता रहा। कुछ काल के अनन्तर गवरगण्डसिंह राजा की माता भी मरीं और राजा साहिब श्मशान में गये और रानी के साले का नाम सुनके बहुत चकित हुए। जब १।)रु. उसका कर देके आगे बढ़े, तब अवसर पाके रानी साहिबा ने पूछा कि आपने किसको कर दिया, आप तो स्वयं राजा हैं। राजा ने कहा कि यह रानी के साले का कर दिया जाता है। रानी ने हँस के कहा कि स्त्रियों के साले नहीं होते, आप समझकर बात कीजिये। राजा ने क्रोध के साथ उत्तर दिया कि इस बात को तो हम भी जानते हैं कि स्त्रियों के साले नहीं होते, परन्तु सनातनधर्म (!) की रीति को मेटना भी तो पाप है। देववृन्द! आजकल दान की यही दुर्दशा जगत् में हो रही है।

आर्यों के लिये शुभ सूचना

'कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर' छपने के लिये तैयार

कुछ समय पूर्व 'परोपकारी' में सूचना प्रकाशित हुई थी कि पं. लेखराम आर्य मुसाफ़िर के साहित्य 'कुल्लियाते आर्य मुसाफ़िर' को परोपकारिणी सभा प्रकाशित करने जा रही है। इस सूचना को पढ़कर आर्यजगत् में उत्साह का संचार होना स्वाभाविक ही था, जिसके परिणामस्वरूप इस ग्रन्थ को छापने के लिये कई साहित्यप्रेमियों ने सभा को सहयोग भी किया, परन्तु पंडित लेखराम जैसे नाम पर यह सहयोग पर्याप्त मालूम नहीं हुआ। पंडित लेखराम वह नाम है जिसके वैदिक-ज्ञान के सामने विरोधी काँपते थे। ऐसे सिद्धान्तमर्मज्ञ ने अपनी संचित ज्ञान-राशि को लेखबद्ध किया और इस लेखबद्ध ज्ञानराशि को यति शिरोमणि स्वामी श्रद्धानन्द जी ने एकत्रित किया और एक ग्रन्थ निर्मित हुआ, जिसका नाम था 'कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर'। यह ग्रन्थ दो भागों में प्रकाशित हुआ। वर्त्तमान में यह ग्रन्थ दुर्लभ हो गया था। परोपकारिणी सभा ने इसे पुन: प्रकाशित करने का निर्णय लेकर पं. लेखराम को पुनर्जीवित कर दिया है। हमने लेखराम का गुणगान ही सुना है, उनके जीवन को ही पढ़ा है, पर वह इस उच्च पदवी को कैसे पा गये- इसकी सच्ची खबर तो उनके लिखे पन्ने ही बता सकते हैं। इन पन्नों को किताब रूप में छापने के लिये जैसा उत्साह, जैसी उमंग दिखनी चाहिये थी, उसमें अभी न्यूनता ही नज़र आती है।

अब यह ग्रन्थ छपने के लिये प्रेस में भेजा जा रहा है। अच्छे कार्यों का सदैव प्रोत्साहन होना चाहिये, इस दृष्टि से इस पुस्तक में **११०००/-रु.** का सहयोग करने वालों के नाम प्रकाशित किये जायेंगे। **एक लाख रु.** से अधिक का सहयोग करने वालों का चित्र सहित आभार व्यक्त किया जायेगा।

आइये, महर्षि दयानन्द के मिशन के लिये अपना जीवन देने वाले आर्यपथिक पं. लेखराम को केवल शब्दों से याद न करके उन्हें पुनर्जीवित करने में भरपूर उत्साह से सहयोग करें।

ओम्मुनि, मन्त्री, परोपकारिणी सभा

परोपकारी के पाठकों से निवेदन

प्रिय पाठकगण, सादर नमस्ते!

आप जैसे सहृदय पाठकों से निवेदन है कि आपकी प्रिय पत्रिका हम आपकी सेवा में निरन्तर प्रेषित कर रहे हैं ताकि युगनिर्माता महर्षि दयानन्द सरस्वती के लोकोपकारी एवं धार्मिक सन्देश जन-जन तक पहुँच सकें तथा उन कल्याणकारी विचारों को पढ़कर प्रत्येक पाठक सदाचारी, धर्मप्रेमी एवं वैदिक विचारधारा का अनुयायी बनकर वर्तमान में प्रचलित पाखण्ड, अन्धविश्वास को छोड़कर बुद्धिजीवी, तार्किक एवं सत्यान्वेषी बनकर समाज में व्याप्त कुरीतियों, कुसंस्कारों से मुक्त रहे।

सज्जनो, हम इस पत्रिका की लाभ-हानि की बात नहीं कर रहे। इस निवेदन में केवल इतना जान लें कि पैसा भी किसी संस्था के प्रचार के लिए आवश्यक है। बहुत से महानुभावों का वार्षिक शुल्क हमें निरन्तर प्राप्त हो रहा है, परन्तु कुछ सदस्यों का शुल्क आता ही नहीं है, वर्षों तक रुका रहता है, पुनरपि उन्हें पत्रिका भेजी ही जाती है। अत: ऐसे सज्जनों से निवेदन है कि परोपकारिणी सभा के बैंक खाते में सदस्यता की रकम जमा कराकर इस पावन पत्रिका के निरन्तर प्रकाशन में आर्थिक सहयोग देकर इस धर्म के स्रोत को जारी रखने की कृपा करें।

आशा है आप महानुभाव वार्षिक शुल्क भिजवाकर हमारा उत्साह निरन्तर बढ़ाते रहेंगे।

शङ्का समाधान – ३७

डॉ. वेदपाल, मेरठ

शङ्का– आत्मा साकार है या निराकार?

पंकज आर्य, दिल्ली

समाधान– वैशेषिक दर्शन में 'पदार्थ' का निरूपण करते हुए 'द्रव्य' की गणना सर्वप्रथम की गई है–

'धर्मविशेषप्रसूताद् द्रव्यगुणकर्मसामान्य-विशेषसमवायानां पदार्थानां साधर्म्य-वैधर्म्याभ्यां तत्त्वज्ञानान्निश्रेयसम्' –१.१.४

द्रव्य परिगणन निम्नवत् है–

'पृथिव्यापस्तेजो वायुराकाशं कालो दिगात्मा मन इति द्रव्याणि' –१.१.५

अर्थात्–पृथिवी–जल–तेज (अग्नि)–वायु–आकाश–काल (समय)–दिशा–आत्मा–मन ये नौ द्रव्य हैं। द्रव्य का लक्षण है–

'क्रियागुणवत् समवायिकारणं द्रव्यलक्षणम्'–१.१.१५

जो क्रिया और गुण का समवायिकारण है, वह द्रव्य है।

आत्मा के लिङ्ग=ज्ञापक चिह्न–

'इच्छाद्वेषप्रयत्नसुखदुःखज्ञानान्यात्मनो लिङ्गम्'

– **न्यायदर्शन** १.१.१०

इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और ज्ञान, इन्हीं से आत्मा की सत्ता/उपस्थिति का बोध होता है। अर्थात् इनमें से कोई भी लक्षण दिखाई दे रहा है तो वहाँ आत्मा का अस्तित्व है और यदि कोई भी लक्षण नहीं है तब निश्चय ही वहाँ आत्मा नहीं है।

आत्मा रूप पदार्थ की सिद्धि में वैशेषिक का मत है कि इन्द्रिय और उनके अर्थों/ग्राह्य विषयों की प्रसिद्धि ही इन्द्रिय और उनके अर्थ से भिन्न आत्मा रूप पदार्थ की सिद्धि में हेतु है–

'इन्द्रियार्थप्रसिद्धिरिन्द्रियार्थेभ्योऽर्थान्तरस्य हेतुः'

–३.१.२

बृहदारण्यक उपनिषद् ४.३.३५ में आत्मा को **'शारीरः' शरीरे भवः शारीरः** शरीर में रहने वाला कहा है। आत्मा के साधक चिह्न शरीर के साथ ही अभिव्यक्त होते हैं। यह आत्मा प्रति शरीर भिन्न होने के कारण संख्या में अनेक हैं। वेद में भी उसे अनेक कहा है–

क– व्यवस्थातो नाना। शास्त्रसामर्थ्याच्च

– वैशेषिक दर्शन ३.२.२०–२१

ख– जीवा ज्योतिरशीमहि – ऋ. ७.३२.२६

ग– शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्राः – यजु. ११.५

आत्मा के संख्या में बहुत्व का वर्णन स्पष्ट करता है कि वह **(आत्मा) विभु–व्यापक निराकार न होकर शरीर में रहने वाला अतः एकदेशी अर्थात् साकार है।** इस विषय में **महर्षि दयानन्द** का अभिमत है–

''प्रश्न–जीव शरीर में भिन्न विभु है वा परिच्छिन्न?

उत्तर– परिच्छिन्न, जो विभु होता तो जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, मरण, जन्म, संयोग, वियोग, जाना, आना कभी नहीं हो सकता। इसलिए **जीव का स्वरूप अल्पज्ञ, अल्प अर्थात् सूक्ष्म है।''** द्रष्टव्य–स.प्र.समु. ७, पृ. १२७, दयानन्द संस्थान संस्करण, संवत् २०२९

आत्मा के परिच्छिन्न एकदेशी होने के समर्थक अन्य प्रमाण हैं–

'उत्क्रान्ति गत्यागतीनाम्' – वे.द. २.३.१९

अर्थात्–आत्मा का शरीर से निकलना (उत्क्रान्ति) अन्यत्र गमन (गति) तथा अन्य स्थान से आना (आगति) आदि से आत्मा का अणु=परिच्छिन्न होना सिद्ध होता है। **कौषीतकी उपनिषद्** ३.३ में भी उत्क्रमण का वर्णन निम्नवत् उपलब्ध है–

''स यदास्माच्छरीरादुत्क्रामति सहैवैतैः सर्वैरुत्क्रामति'' बृहदारण्यक में आगति का वर्णन द्रष्टव्य है– **''तस्माल्लोकात् पुनरेत्यस्मै लोकाय कर्मणे''**

– बृ.उ. ४.४.६

यदि यह कहें कि आत्मा अणु–एकदेशी नहीं है, क्योंकि श्रुति में विभु कहा गया है, तो उसका उत्तर है कि वहाँ अन्य (आत्मा–परमात्मा) का प्रसङ्ग है। तद्यथा–

'नाणुरतत् श्रुतेरिति चेन्नेतराधिकारात्'

– वे.द. २.३.२१

मुण्डक आदि उपनिषद् में आत्मा को अणु कहा गया है-

क- एषोऽणुरात्मा चेतसा वेदितव्यो यस्मिन्प्राणः पञ्चधा संविवेश - मुण्डक ३.१.९

ख- बालाग्रशतभागस्य - श्वे. ५.९

उपर्युद्धृत औपनिषदिक उद्धरणों में आत्मा को अणु परिमाण तथा केश के अग्रभाग के दस हजारवें भाग के बराबर कहा गया है। वहाँ अणु अथवा केश के दस हजारवें भाग के समान कहने का अभिप्राय अत्यन्त सूक्ष्म अर्थात् सबसे छोटी इकाई बताना है। **कोई भी पदार्थ कितना ही सूक्ष्म क्यों न हो, वह यदि विभु न होकर एकदेशी है, तो वह साकार ही होगा।**

इस प्रकार **आत्मा/जीवात्मा परिच्छिन्न-एकदेशी होने से अणु परिमाणवाला है। उत्क्रान्ति, गति, आगति एकदेशी में ही सम्भव हैं। विभु पदार्थ में उत्क्रमण आदि सम्भव नहीं है। अतः आत्मा अणु-परिच्छिन्न परिमाण वाला होने से साकार है।**

परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल ऋषि उद्यान में अष्टाध्यायी अनुक्रम से संस्कृत व्याकरण, दर्शन एवं अन्य ऋषिकृत ग्रन्थों की कक्षाएँ प्रारम्भ हो रही हैं। अध्ययन आर्ष पाठविधि से कराया जायेगा। विद्यार्थियों के आवास एवं भोजनादि का सम्पूर्ण व्यय सभा की ओर से किया जायेगा। गुरुकुल सम्बन्धी सभी नियमों एवं दिनचर्या आदि का पालन अनिवार्य होगा। विद्यार्थी की आयु न्यूनतम १६ वर्ष हो। इच्छुक छात्र निम्नलिखित पते पर सम्पर्क करें।

आचार्य विद्यादेव,
महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल,
ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग,
अजमेर-३०५००१ (राज.)
सम्पर्क-९८७९५८७७५६, ०१४५-२४६०१६४,
Email- psabhaa@gmail.com

ऋषि मेला २०१८ हेतु स्टॉल आवंटन

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष ऋषि मेला १६, १७, १८ नवम्बर शुक्र, शनि, रविवार २०१८ को ऋषि उद्यान में आयोजित होगा। उसमें आर्य जगत् का साहित्य, हवन सामग्री, अन्यान्य सामग्री की स्टॉल लगती हैं। प्रति स्टॉल किराया १००० रु. निर्धारित है। जिसकी राशि पहले जमा होगी उसी क्रम से स्टॉल का आवंटन होगा। जिन महानुभावों को जितनी स्टॉल की आवश्यकता है, उसी अनुरूप राशि बैंक ड्राफ्ट द्वारा या नकद जमा करावें।

स्टॉल सुविधाः- कारपेट, दो टेबल, दो कुर्सी, २ ट्यूब लाइट प्रति स्टॉल। **स्टॉल साइज**- ७.५×१५ फीट।

ध्यातव्य- १. स्टॉल में रखी टेबल, कुर्सी आदि पूर्व निर्धारित सामग्री को इधर-उधर या अन्य स्टॉल में न बदलें। **२.** अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता हो तो टैन्ट हाउस के कर्मचारी से सम्पर्क कर प्राप्त करें तथा निर्धारित राशि तुरन्त भुगतान करें। **३.** बिस्तर, रजाई, चादर, तकिया को टेन्ट हाउस कर्मचारी से प्राप्त कर निर्धारित राशि जमा करा दें। **४.** स्टॉल व्यवस्थापक से स्टॉल संख्या, राशि की रसीद दिखाकर प्राप्त करें। बिना पूर्व अनुमति के स्टॉल में सामान न रखें, न अधिकृत करें। **५.** आपके सक्रिय सहयोग व अनुशासन की अपेक्षा है। अनियमितता को स्थान न देवें। ६. अपना मोबाइल (चलभाष) नवम्बर देना अति आवश्यक है। ७. आप अपना स्थाई पता अवश्य देवें। ८. स्टॉल में आप पुस्तकें/दवाइयाँ/अन्य सामग्री का उल्लेख अवश्य करें। ९. स्टॉल आवंटन हेतु अग्रिम राशि जमा करावें, अन्यथा विचार सम्भव नहीं होगा। १०. एक पासपोर्ट फोटो भिजवावें, जो परिचय पत्र के साथ अंकित हो। उसमें स्टॉल आवंटन संख्या भी अंकित किया जाएगा। ११. स्टॉल आवंटन की सूचना निर्धारित अवधि में दी जायेगी। **नोटः**- किसी प्रकार का अवैदिक साहित्य एवं सामग्री न हो अन्यथा उचित कार्यवाही सम्भव होगी।

संस्था समाचार

अन्तर्राष्ट्रीय महासम्मेलन में वैदिक पुस्तकालय - परोपकारिणी सभा का प्रकाशन विभाग 'वैदिक पुस्तकालय' अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन दिल्ली में दिनांक २५ अक्टूबर से २८ अक्टूबर तक वैदिक साहित्य के साथ रहा। इस कार्य में सभा की सदस्य श्रीमती ज्योत्स्ना धर्मवीर जी के निर्देशन में श्री दिवाकर, श्री चिरञ्जीलाल व श्री चन्दर आदि ने विक्रय-केन्द्र पर अपनी सेवायें दीं।

इस सम्मेलन में सभा की ओर से नई प्रकाशित पुस्तकों की काफी माँग रही। ईश्वर, त्रैतवाद, आख्यातिक, ज्ञानामृत, अंग्रेज जीत रहा है, सत्यार्थप्रकाश, वेदांगप्रकाश, स्तुतामया वरदा वेदमाता, वेद-पथ के पथिक आदि पुस्तकों को साहित्य एवं स्वाध्याय-प्रेमियों ने हाथों-हाथ लिया। 'ईश्वर' पुस्तक में विश्व के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों द्वारा ईश्वर की सत्ता को सिद्ध किया गया है। इस पुस्तक को वितरित करने की भी कइयों ने इच्छा प्रकट की। अधिकांश पुस्तकों की सभी प्रतियाँ बिक गई। सभा का प्रकाशन विभाग निरन्तर प्रगति के पथ पर अग्रसर है। पंडित लेखराम आर्यमुसाफिर के ग्रन्थ संग्रह 'कुल्लियात आर्य मुसाफिर' का प्रथम भाग भी प्रकाशित हो चुका है। पाठकगण ऋषि मेले के अवसर पर इस अमूल्य निधि को प्राप्त कर पायेंगे।

अतिथि-यज्ञ के होता- २८ अक्टूबर को सभा के कोषाध्यक्ष श्री सुभाष नवाल अपने ६०वें जन्मदिन पर सपत्नीक अतिथि यज्ञ के होता बने।

दैनिक यज्ञ एवं प्रवचन-प्रातः एवं सायंकाल यज्ञोपरान्त आचार्य विद्यादेव जी, डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी, श्री ओममुनि जी, श्री रमेश मुनि और श्री प्रभाकर जी के व्याख्यान हुए। गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने भजन सुनाए।

अतिथि- अजमेर नगर में केसरगंज स्थित ऐतिहासिक महर्षि दयानन्द आश्रम, वैदिक यन्त्रालय, अनुसन्धान भवन एवं वैदिक पुस्तकालय, ऋषि निर्वाण स्थल-भिनाय कोठी, ऋषि अन्त्येष्टि स्थल-मलूसर, ऋषि उद्यान स्थित महर्षि दयानन्द सरस्वती संग्रहालय, महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल आदि महत्त्वपूर्ण स्थानों को देखने, संन्यासियों-विद्वानों से मिलकर शंका-समाधान करने, उपदेश ग्रहण करने, व्याकरण-दर्शन-वेद-उपनिषद् आदि शास्त्रों का अध्ययन करने, दैनिक यज्ञ एवं प्रवचन से लाभ लेने, पुष्कर आदि पर्यटन स्थलों में भ्रमण एवं आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार के लिए देश-विदेश के संन्यासी, वानप्रस्थी, विद्वान्, पुरोहित, ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी, आर्यवीर, आर्यवीरांगना, आर्यसमाज के कार्यकर्त्ता, विद्यालय-महाविद्यालय-विश्वविद्यालय में अध्ययनरत छात्र-छात्रायें, गृहस्थ स्त्री-पुरुष और बच्चे निरन्तर आते रहते हैं। सभी आगन्तुकों के निवास एवं नाश्ता, भोजन, दूध आदि की समुचित व्यवस्था ऋषि उद्यान में उपलब्ध रहता है। पिछले १५ दिनों में बाड़मेर, गुरुग्राम, श्रीगंगानगर, रुड़की, नई दिल्ली, मुम्बई, जामनगर, चम्पारण, रोहतक, टंकारा, अलीगढ़, हैदराबाद, वजीराबाद, पाली, पटना आदि स्थानों से कुल १७१ अतिथिगण ऋषि उद्यान पधारे।

इसी क्रम में हन्सुगाँव-सूरीनाम एवं सिरहा-नेपाल से एक-एक तथा नीदरलैण्ड से १० अतिथि आये। श्री दिलीप वेलाणी और लालजी भाई के नेतृत्व में घाटकोपर मुम्बई निवासी ११ व्यक्ति आये। आचार्य आर्यबन्धु के नेतृत्व में टंकारा आर्यसमाज के ५० सदस्यों तथा श्री अशोक जी और श्री वीरेन्द्र जी नेतृत्व में आर्य समाज हैदराबाद के २४ सदस्यों का समूह अंतर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन २०१८ रोहिणी, दिल्ली में सम्मिलित होने के लिये जाते हुए ऋषि उद्यान पधारे।

जो विद्वान् लोग परोपकार बुद्धि से विद्या का विस्तार करने, सुगन्धि, पुष्टि, मधुरता, रोगनाशक गुणयुक्त पदार्थों का यथायोग्य मेल, अग्नि के बीच में उनका होम कर, शुद्ध वायु, वर्षा का जल वा ओषधियों का सेवन करके शरीर को आरोग्य करते हैं वे इस संसार में अत्यन्त प्रशंसा के योग्य होते हैं।

- महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.५८

पाठकों की प्रतिक्रिया

परोपकारी का अगला अंक कब प्राप्त होगा। ऐसी उत्कंठा सदैव बनी रहती है। प्रथम दृष्टि 'कुछ तडप कुछ झडप' पर जाती है। श्रद्धेय जिज्ञासु जी वैसे तो सदैव ही कटु सत्य और महत्वपूर्ण घटनाओं और तथ्यों का उद्घाटन करते ही हैं परंतु इस अंक (अक्टूबर द्वितीय २०१८) में तो आपने एक वाक्य मे ही आर्य समाज की वर्तमान स्थिति का पोस्टमार्टम कर दिया है कि ये आर्य मंदिर नहीं रहे, आर्यसमाज के कब्रिस्तान बन गए हैं। समाज, स्वाध्याय और सत्संग के स्थान पर समाज की सम्पत्ति ही तथाकथित आर्यसमाजियों का केन्द्र बिंदु बनकर रह गए हैं।

आर्य समाज की वर्तमान दुर्दशा पर इससे हृदयस्पर्शी, मार्मिक और सटीक टिप्पणी हो नहीं सकती। ऋषि की ज्योति को निरंतर जलाए रखने के लिए श्रद्धेय जिज्ञासु जी और परोपकारी पत्रिका साधुवाद के पात्र हैं।

- प्रो. वीरेंद्र शर्मा, देहरादून

अपील

'सत्यार्थप्रकाश' जैसी क्रान्तिकारी पुस्तक के प्रति किस आर्य की श्रद्धा नहीं होगी और कौन वैदिकधर्मी यह नहीं चाहेगा कि यह पुस्तक हर मनुष्य के हाथ में होनी चाहिये? आर्यों की इस तीव्र अभिलाषा को परोपकारिणी सभा गत ५ वर्षों से साकार रूप देने में प्रयासरत है। साथ में यह भी चाहती है कि यह अमूल्य पुस्तक आकार-प्रकार में भी आकर्षक ही हो। इन सबको ध्यान में रखकर सभा ने विश्व पुस्तक मेले में इसे ऐसे व्यक्तियों में वितरित करने का निश्चय किया जिन तक यह अभी नहीं पहुँच पाई थी। इस कार्य में परोपकारिणी सभा तो एक माध्यम मात्र है, मुख्य वितरक आर्यजन ही हैं। विश्व पुस्तक मेला- २०१९ का कुछ ही समय शेष है। अत: आर्यों से अपील है कि अधिक से अधिक लोगों तक सत्यार्थ पहुँचे, इसके लिये मुक्त हस्त से सहयोग करें। सत्यार्थप्रकाश के साथ-साथ महर्षि दयानन्द सरस्वती का जीवन-चरित्र भी नि:शुल्क वितरित किया जायेगा। आप जितनी प्रतियाँ अपनी ओर से बंटवाना चाहें, उतनीं पुस्तकों पर आपका नाम छापा जायेगा।

एक प्रति की लागत- १००रु.

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी बाजार, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0007959

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

ऋषि दयानन्द ने कहा था

विद्वान् एकमत हो प्रीति से वर्तें

यद्यपि आजकल बहुत से विद्वान् प्रत्येक मतों में हैं, वे पक्षपात छोड़, सर्वतन्त्र सिद्धान्त अर्थात् जो-जो बातें सबके अनुकूल सब में सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक-दूसरे के विरुद्ध बातें हैं, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्तें-वर्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे। क्योंकि विद्वानों के विरोध से अविद्वानों (साधारण जनों) में विरोध बढ़कर अनेकविध दु:ख की वृद्धि और सुख की हानि होती है। (स. प्र. भू.)

आर्यजगत् के समाचार

१. वेद प्रचार सम्पन्न- आर्यसमाज स्वामी दयानन्द मार्ग, अम्बाला छावनी का वार्षिक वेद प्रचार समारोह श्रीमती विजय गुप्ता के प्रधानत्व में सहर्षोल्लास सम्पन्न हुआ। मुख्य वक्ता और यज्ञ के ब्रह्मा डॉ. महावीर-कुलपति पतञ्जली, हरिद्वार थे। इस अवसर पर राष्ट्र रक्षा सम्मेलन तथा कवि गोष्ठी का आयोजन भी किया गया।

२. पुरोहित की आवश्यकता- वैदिक आश्रम और वैदिक मन्दिर के लिए पुरोहित, जो यज्ञ-प्रवचन कर सकें, की आवश्यकता है। उनके खानपान तथा रहन-सहन का भार आश्रम वहन करेगा। **सम्पर्क**- ९९९७३३७९३१

३. वेद प्रचार- महर्षि दयानन्द सरस्वती वैदिक विचार चैरिटेबल ट्रस्ट परतवाड़ा, जि. अमरावती महाराष्ट्र में दि. ९ से २३ अक्टूबर २०१८ तक वेद प्रचार किया गया। आर्यसमाज सारनी, जि. बैतूल, आर्यसमाज छिन्दवाड़ा, आर्यसमाज पथ्रोट, परतवाड़ा तथा गाँव मल्हारा, लाखनबाड़ी, सालेपुर आदि स्थानों पर परोपकारिणी सभा से पं. भूपेन्द्रसिंह आर्यभजनोपदेशक एवं पं. लेखराज शर्मा व परोपकारिणी सभा के श्री सत्यप्रिय जमानी आश्रम से पधारे ब्र. निरंजन आर्य ने वेद प्रचार में सहयोग प्रदान किया। ट्रस्ट ने सभा के सहयोग के लिए धन्यवाद दिया।

४. वार्षिकोत्सव सम्पन्न- आर्यसमाज लुहाना जिला रेवाड़ी, हरि. का ८वाँ वार्षिकोत्सव दि. ०३ एवं ०४ नवम्बर २०१८ को हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। इस अवसर पर आर्यजगत् के विद्वान्, समाजसेवी एवं कई प्रतिष्ठित संन्यासी उपस्थित थे।

५. वेद प्रचार- दि. २१ अक्टूबर २०१८ को वेद प्रचार एवं समाज कल्याण समिति, कल्याणनगर, मेरठ, उ.प्र. के तत्त्वावधान में इन्द्रा कॉलोनी, वाल्मीकि बस्ती, सूरजकुण्ड मेरठ में एक भव्य कार्यक्रम आयोजित किया गया, जिसमें वाल्मीकि समाज के ५२ मेधावी छात्र-छात्राओं को सम्मानित किया गया। भजनोपदेशक पं. अजय आर्य ने भजन व विद्वान् पं. लक्ष्मीचन्द आर्य ने ओजस्वी प्रवचन दिये। कार्यक्रम में श्री सत्यपालसिंह आर्य, यशपालसिंह, शिवकुमार राणा, महेश प्रतापसिंह व पूजासिंह आदि का सहयोग रहा।

शोक समाचार

६. आर्यसमाज केसरगंज अजमेर के अधिकारी आचार्य गोविन्दसिंह (भूतपूर्व प्रधानाध्यापक सूर्यदेव माध्य. विद्यालय अजमेर) की सुपुत्री **सुषमा आर्या** का आकस्मिक निधन जयपुर शहर में एक दुर्घटना में हो गया। सुषमा जी डी.ए.वी. स्कूल, जयपुर में अध्यापिका थीं प्रभु से प्रार्थना है कि दिवंगत आत्मा को सद्गति प्रदान करे।

७. श्री गोपालसिंह (सेवाधारी परोपकारिणी सभा) की माताजी **श्रीमती सुगनी देवी** का ८८ वर्ष की आयु में २४ अक्टूबर २०१८ को निधन हो गया। उनका भरापूरा परिवार है। सभी सदस्यों को प्रभु धैर्य प्रदान करें।

८. आर्यजगत् के वैदिक विद्वान् **श्री बाबूलाल जोशी** का निधन १ अक्टूबर २०१८ को तिल्लोर, तह. इन्दौर, म.प्र. में हो गया। आप नियमित रूप से ऋषि मेले के अन्तर्गत होने वाली वेद गोष्ठी में भी पधारते थे। सभा की वेदगोष्ठी में भी आप वर्षों से भाग ले रहे थे। आपकी प्रसिद्ध पुस्तक 'वेद में विज्ञान' काफी चर्चित है। आप अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़ गये।

९. सभा की अन्तर्राष्ट्रीय पाक्षिक पत्रिका परोपकारी से जुड़े **श्री राजेश अग्रवाल** का आकस्मिक निधन १४ अक्टूबर २०१८ को हो गया।

इन सभी दिवंगत आत्माओं को परोपकारिणी सभा हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करती है।

कल्पित संन्यासी

जब ऐषणा ही नहीं छूटी तो संन्यास क्यों कर हो सकता है? पक्षपात रहित सत्योपदेश से जगत् का कल्याण करने में अहर्निश प्रवृत्त रहना संन्यासियों का मुख्य काम है। अब अपने अधिकार कर्मों को नहीं करते पुन: संन्यासादि नाम धरना व्यर्थ है। नहीं तो, जैसे गृहस्थ व्यवहार और स्वार्थ में परिश्रम करते हैं, उनसे अधिक परिश्रम परोपकार करने में संन्यासी भी तत्पर रहे, तभी सब आश्रम उन्नति पर रहें। जब लों वर्तमान और भविष्यत् में संन्यासी उन्नतिशील नहीं होते, तब लों आर्य्यावर्त और अन्य देशस्थ मनुष्यां की वृद्धि नहीं होती। **(स. प्र. स. ११)**

ऋषि मेला – २०१८
स्थान – ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर
कार्यक्रम

शुक्रवार, दिनांक १६ नवम्बर, २०१८

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–
प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.०० तक – यज्ञ, वेदपाठ।

०९.०० से ०९.३० तक – वेद प्रवचन
ब्रह्मा –डॉ. विनय विद्यालंकार

०९.३० से १०.०० तक – प्रातराश

१०.०० से ११.०० तक – **ध्वजारोहण व उद्‌घाटन सत्र**

११.०० से १२.३० तक – **वर्तमान में गुरुकुलों की प्रासंगिकता**

१२.३० से १४.०० तक – भोजन, विश्राम

१४.०० से १७.०० तक –**महिला उत्थान और आर्यसमाज**
भजन–प्रवचन–सम्मान

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ, सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **वेद में राष्ट्र की अवधारणा**
भजन–प्रवचन–सम्मान

शनिवार, दिनांक १७ नवम्बर, २०१८

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–
प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.०० तक – यज्ञ, वेदपाठ।

०९.०० से ०९.३० तक – वेद–प्रवचन
ब्रह्मा – डॉ. विनय विद्यालंकार

०९.३० से १०.०० तक – प्रातराश

१०.०० से १२.३० तक – **आ. धर्मवीर वेद प्रचार सम्मेलन**
भजन–प्रवचन–सम्मान

१२.३० से १४.०० तक – भोजन व विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **मानव निर्माण में योग की भूमिका**
भजन–प्रवचन–सम्मान

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ–सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **पुनर्जागरण आन्दोलन और महर्षि दयानन्द, भजन–प्रवचन–सम्मान**

रविवार, दिनांक १८ नवम्बर, २०१७

०५.०० से ०६.३० तक – सूक्ष्म क्रियाएँ–आसन–
प्राणायाम–ध्यान–सन्ध्या

०७.०० से ०९.३० तक – यज्ञ, वेदपाठ, **पूर्णाहुति**,

०९.३० से १०.०० तक – वेद–प्रवचन
ब्रह्मा–डॉ. विनय विद्यालंकार

१०.०० से १०.३० तक – प्रातराश

१०.३० से १२.३० तक – **विश्व कल्याण और आर्यसमाज**
भजन–प्रवचन–सम्मान

१२.३० से १४.०० तक – भोजन व विश्राम

१४.०० से १७.०० तक – **समाज सुधार में युवाओं की भूमिका, भजन एवं प्रवचन**

१८.०० से २०.०० तक – यज्ञ–सन्ध्या व भोजन

२०.०० से २२.०० तक – **धन्यवाद व समापन सत्र**

वेद–गोष्ठी

विषय	:	**षड्‌दर्शनों की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द**
१६ नवम्बर	:	उद्‌घाटन सत्र – ११.०० से १२.३० तक
	:	द्वितीय सत्र – १४.३० से १७.०० तक
१७ नवम्बर	:	तृतीय सत्र – १०.०० से १२.३० तक
	:	चतुर्थ सत्र – १४.३० से १७.०० तक
१८ नवम्बर	:	समापन सत्र

कार्यक्रम में आवश्यकतानुसार परिवर्तन संभव है।